RNI No. : UPHIN-2009/29369

डाक पंजीकरण : MISC/CPM/01/KPHO/2019-21
प्रधान डाकघर कानपुर-डाक प्रेषण दिनांक 29/30

वार्षिक सदस्यता शुल्क 100/-

द्रविड़ भारत

www.dbindia.org.in

सामाजिक परिवर्तन का मासिक पत्र

जुलाई 2019 | वर्ष – 11 | अंक : 6 | मूल्य : 5/-

सम्पादकीय

RNI No. : UPHIN-2009/29369

संपादक : उमेश्वरी देवी, मो.: 9005204074

संरक्षक मण्डल :

मा. रामदीन अहिरवार (महोबा), मा. राम अवतार चौधरी (इं. जल संस्थान), मा. छविलाल वर्मा (चरखारी), मा. हरिनाथ राम (दिल्ली), मनीष कुमार मो. 9415053621

कानूनी सलाहकार :

एड. रामप्रकाश अहिरवार, एड. यू.के. यादव, मोती लाल वर्मा, एड. विजय बहादुर सिंह राजपूत, एड. रमाकान्त धुरिया, एड. सुशील कुमार

राज्य उत्तर प्रदेश राज्य ब्यूरो प्रमुख :

सुनीता धीमान, 414/12, शास्त्री नगर, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 9450871741

क्षेत्रीय सम्पादकीय कार्यालय :

40/69, डी-5, श्यामलाल का हाता, परेड, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 8756157631

मध्य प्रदेश राज्य :

ब्यूरो चीफ मुकेश कुमार अहिरवार, छत्तरपुर, मो.: 09039546658

छत्तीसगढ़ राज्य :

दिलीप कुमार कोसले, मो. : 09424168170

दिल्ली प्रदेश :

C/o अनिल कुमार कनौजिया C-260, हर्ष विहार, हरिनगर एक्सटेंशन पार्ट-III, बदरपुर, नई दिल्ली-44, मो. : 09540552317

राजस्थान राज्य :

रघुनाथ बौद्ध, श्याम रघु फुट वियर, दुकान नं.-1, गणेश मार्केट, पुलिस चौकी के सामने, अलवर, जिला-अलवर-301001, मो. : 09887512360

चिरंजीलाल बैरवा (व्यावस्थापक) मेहरा आदर्श विद्या मन्दिर, भीम नगर कालोनी, राज भट्टा, दिल्ली रोड, अलवर, जिला-अलवर, मो.-09829855349

बाबूलाल बौद्ध, अलवर, मो.-08058198233

हरियाणा राज्य :

डा. रमेश रंगा, ग्राम-सराय, औरंगाबाद, पो.-बहादुरगढ़,जिला-झज्जर (हरियाणा),09416347052

संपादकीय/विज्ञापन प्रसार/पंजीकृत कार्यालय :

ग्रा व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला-महोबा (उ.प्र.)

मो. : 9005204074, 8756157631

E-mail : dravinbharat1@gmail.com

प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी

उमेश्वरी देवी द्वारा ग्रा. व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला महोबा से प्रकाशित व श्रेय ऑफसेट प्रा. लि., 109/406, नेहरू नगर, कानपुर, 84/1, बी, फजलगंज, कानपुर

प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित लेख, सामग्री, में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का दावा या विचार मान्य नहीं होगा। लेख के विवादित होने पर लेखक ही उत्तरदायी होगा समस्त विवादों का निपटारा महोबा न्यायालय में होगा पत्रिका का संपादन एवं संचालन पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।

मिशन को बढ़ाने के लिए सहयोग करें -
भारतीय स्टेट बैंक, शाखा-नवीन मार्केट, कानपुर
खाता सं.-33496621020 • IFSC CODE-SBIN005307

इन्सानियत की जिन्दगी जीने के लिए बुद्ध धम्म की आवश्यकता -कांशीराम

(नागपुर)

'' हजारों वर्षों से इस देश का दलित–शोषत समाज ब्राम्हणवादी समाज व्यवस्था का शिकार है। इस पीड़ित समाज को समानता का दर्जा देने के लिए स्वाभिमान के साथ जीने के लिए, बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने बुद्ध धम्म का रास्ता 14 अक्टूबर 1956 में अपनाया। उनके महापरिनिर्वाण के पश्चात बाबा साहब द्वारा प्रारम्भ की गई धम्म–क्रांति को उनके सहयोगी सही दिशा में बढ़ा नहीं सके और आज भी उनका वह सपना अधूरा ही रह गया है। हम समझते हैं कि इस दिशा में कार्य करना हमारा कर्तव्य बन जाता है इसलिए हमारे पास उपलब्ध सभी साधनों का इस्तेमाल कर हमें विशाल संघ का निर्माण करना है। इस संघ–शक्ति के आधार पर हम जो चाहेंगे वह प्राप्त कर पायेंगे। इसी संघ–शक्ति के आधार पर हम दलित–शोषित समाज को समता और स्वाभिमान के साथ जीने का माहौल निर्माण कर पाएंगे।''

उपरोक्त विचार बुद्धिस्ट रिसर्च सेन्टर के संस्थापक मा. कांशीराम जी ने बी.आर.सी. द्वारा 1 जनवरी 1984 को 'अम्बाझरी गार्डन सांस्कृतिक भवन' के मैदान में उपस्थित बौद्ध धर्मीय जनता को सम्बोधित करते हुए प्रकट किये।

धम्म क्रांति के सम्बन्ध में आगे बोलते हुए मा. कांशीराम जी ने कहा कि समाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़े जनसमुदाय की प्रगति के लिए बाबा साहब ने बुद्ध धम्म की दीक्षा दी। परन्तु धर्म परिवर्तन के 53 दिन के भीतर ही उनका परिनिर्वाण हुआ और उनके द्वारा शुरू की गई धम्म क्रांन्ति जिस तरह से आगे बढ़नी चाहिए थी बढ़ नहीं सकी। उनकी इस धम्म क्रांन्ति को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी उनके अनुयाइयों की थी। परन्तु निजी स्वार्थ के कारण वे भी इस धम्म क्रांन्ति को आगे बढ़ा नहीं सके।

आगे आपने कहा–1975 में इसी स्थान पर 'बौद्ध शिखर परिषद्' का आयोजन किया गया था, जो 1956 की धम्म क्रान्ति के 18–19 वर्ष बाद का प्रयास था। इस परिषद् में देश के कोने–कोने से बौद्ध धर्मीय नेतागण आये थे। विशाल स्तर पर आयोजित इस परिषद् ने बौद्ध धर्मीय जनता में आशा की एक नई ज्योति प्रज्वलित की थी। परन्तु आज 8 वर्ष के पश्चात भी धम्म –प्रसार की दृष्टि से कोई प्रगति नजर नहीं आ रही है इसीलिए फिर 8 वर्ष के पश्चात हम यहाँ इकट्ठे हुये हैं।

धम्म दीक्षा सम्मेलन की वर्षगांठ के सम्बन्ध में बोलते हुए कांशीराम जी ने कहा कि जब हम धम्म दीक्षा की 25वीं वर्षगांठ मना रहे थे, मैंने समाचार पत्रों में पढ़ा जिसमें दलितों द्वारा मुस्लिम धर्म में धर्म परिवर्तन की खबरें छपती थीं। इतना ही नहीं बल्कि मैंने यहाँ तक सुना कि नागपुर के करीब ही एक देहात में एक बौद्ध धर्मीय परिवार का कार्यक्रम बाबा साहब के महापरिनिर्वाणदिवस के अवसर पर नियोजित था और विशेष आश्चर्य देने वाली बात यह थी कि से प्रोत्साहित करने में हमारे नेता ही आगे थे। इस बात का मुझे काफी दुख हुआ। मैं यह महसूस करने लगा कि इस दिशा में हमें कुछ करना होगा। इसी दृष्टिकोण को सामने रख हमने 2 वर्ष पूर्व दिल्ली में बुद्धिस्ट रिसर्च सेन्टर की स्थापना की।

वर्तमान धार्मिक संस्थाओं की ओर इशारा करते हुए आपने कहा कि अगर वर्तमान धार्मिक संस्थाओं ने यह कार्य किया तो हमें नई संस्था बनाने की आवश्यकता महसूस नहीं हुई होती। परन्तु मजबूर होकर हमें बी. आर. सी. का निर्माण करना पड़ा। मुझे मालूम है, नई संस्था का निर्माण यानि संघ शक्ति का विघटन। परन्तु बाबा साहब की धम्म क्रान्ति को सही दिशा और गति नहीं मिलने से हमें नई संस्था के माध्यम से इस कार्य को अपने हाथ में लेना पड़ा।

आगे अपनी भूमिका अधिक स्पष्ट करते हुए मा. कांशीराम जी ने कहा–बामसेफ, डी–एस4, राजनीति आदि कई फ्रन्ट पर मेरे कार्यरत रहने पर कई लोगों ने यह शंका प्रकट की कि मैं धार्मिक आन्दोलन का विरोधी हूँ। परन्तु मेरी यह धारणा थी कि जब हमारे कुछ नेतागण इस कार्य में जुटे हुए हैं तब मुझे इस कार्य में पड़ने की जरूरत नहीं होगी। परन्तु जब देखा कि यह कार्य जिस तरह चलना चाहिए उस तरह चल नहीं रहा और इसीलिए फिर मुझे इधर भी ध्यान देने के लिए मजबूर होना पड़ा।

जब मैं कुछ करने के लिये आगे बढ़ता हूँ तब हमारे अपने लोग ही किस तरह रास्ते में रोड़े अटकाते हैं, यह कहते हुए आपने कहा कि अगर वे स्वयम् कुछ नहीं कर सकते, तब कम से कम हमें तो समाज के लिये कुछ करने दें और हमारे रास्ते में रोड़े न अटकायें।

अन्त में आपने कहा कि अगर आज भी ये नेता और संगठन धम्म क्रान्ति को आगे बढ़ाने में अपनी जिम्मेदारी समझते हैं, और आगे बढ़ते हैं तो हम उन्हें हर तरह का सहयोग देने के लिए तैयार हैं, और अगर वे ऐसा करने से हिचकिचाते हैं तो हमसे जितना बन पायेगा, हम करेंगे। लेकिन हम जो करेंगे उसकी जानकारी हर माह जनता को देते रहेंगे।

नागपुर की जनता को धन्यवाद देते हुए आपने कहा कि इन तीन दिन के परिसंवाद के दौरान नागपुरवासी बौद्ध धर्मीय जनता ने जो सहयोग दिया और बाहर से आये अतिथिगण के प्रति जो आत्मयता दर्शायी इसके लिये मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ और आगे भी यह सहयोग और प्रेम हमें मिलता रहेगा ऐसी अपेक्षा करता हूँ।

जनसभा को डॉ. भदन्त आनन्द कौसल्यायन (नागपुर), स्नेह कुमार चकमा (अगरतल्ला, त्रिपुरा), आर.डी. सुमन (नई दिल्ली), अनागरिका संघमित्रा (नासिक), भन्ते धम्म दीप (उत्तर प्रदेश), एड. पी. एस. धनवे (नांदेड़), के अलावा प्रो. अरूण चौधरी (दिल्ली), भन्ते शीलभद्र (इटावा), भन्ते बुद्ध शरण (फिरोजाबाद), प्रा. परमे राव (हैदराबाद) आदि ने सम्बोधित किया। भदन्त आनन्द कौसन्यायन ने उपस्थित बौद्ध समुदाय को पंचशील और त्रिशरण ग्रहण करवाया। कार्यक्रम का संचालन पंडित राव सोनोने ने किया तथा प्रदर्शन एस. के. पाटिल ने किया।

साभार
मा. कांशीराम साहब के ऐतिहासिक भाषण
खण्ड–2, (पृष्ठ सं० 259से 261 तक)
ए. आर. अकेला

ऐतिहासिक दस्तावेज

(1) सतपथ ब्राह्मण (1, 81–1) में कहा गया है कि मनु को हाथ धोते समय एक मछली मिली। उसने मनु से कहा, ''मुझे बचाओ, मैं तुम्हारी रक्षा करूंगी।'' मछली बड़ी होने पर समुद्र में डाल दी गई। जब प्रलय हुई और केवल जल रह गया तो उसने मनु की नाव को बचाया। मनु ने विश्वोत्पति की इच्छा से यज्ञ प्रारंभ किया। बचे हुए दूध, मक्खन तथा दही की हवि को पानी में डालते गए। उससे एक इढ़ा नामक कन्या उत्पन्न हुई, उसी के द्वारा विश्व की उत्पत्ति हुई।

(2) सतपथ ब्राह्मण (6,1,2,11) में कहा गया है कि विश्व की उत्पत्ति प्रजापति से हुई। उन्होंने (प्रजापति ने) ऊपर की वायु से देवताओं और नीचे की वायु से राक्षसों की उत्पत्ति हुई।

सतपथ ब्राह्मण (7,5,2,6) में कहा गया कि सृष्टि के प्रारंभ से केवल आत्मा थी। उसने कहा ''सौ, हं'' यानी मैं वह हूं। उसने अपने को दो हिस्सों में होने की इच्छा की, फलस्वरूप पहला पुरूष और दसूरा स्त्री हुई। उनके रमण से मानव पैदा हुए स्त्री ने सोचा कि मैं इससे पैदा हुई इससे रमण कैसा? अतएव वह गाय बन गई और पुरूष बैल। फिर दोनों ने घोड़ा और घोड़ी का रूप रखकर घोड़ा व घोड़ी पैदा की तथा जानवर हुए। फिर एक बकरा दूसरी बकरी और अन्य जानवरों का रूप रखकर दोनों ने सृष्टि की रचना की।

(3) तेतरीय ब्राह्मण (2,2,9,1) में लिखा है कि आदि में कुछ नहीं था। न आकाश न पृथ्वी, न हवा। ब्रह्मा ने इरादा किया कि मैं होऊ तो एक शक्ति पैदा हुई। इस शक्ति से धुआं पैदा हुआ, फिर रोशनी, फिर बादल, फिर समुद्र और फिर प्रजापति ने सोचा ''कि मैं क्यों पैदा हुआ'' जब वे रोए तो जो आंसू पानी में गिरा उससे पृथ्वी बनी, जो आंसू उड़ गया उससे हवा और आकाश बना। फिर प्रजापति ने तपस्या की। उन्होंने अपने उदर से असुओं को पैदा किया। इसके बाद फिर उसे सृजन की इच्छा हुई तो मुनियों को योनि से पैदा किया और देवताओं को मुख से पैदा किया।

(4) महाभारत के बाण पर्व में ऋषि मनु द्वारा कही गई बात लिखी है कि मनु वैवस्वत के पुत्र प्रजापति के समान तेजवान थे। उन्होंने दस हजार वर्ष तपस्या की। एक दिन चिरणी नदी के किनारे उनके पास एक मछली आई और कहने लगी, ''भगवान मुझे बचाइए बड़ी मछली मुझे खा जाएगी।'' मनु ने उसे घड़े में डाल दिया, ज्यादा बड़ी होने पर उसे तालाब में, फिर गंगा में और फिर ज्यादा बड़ी होने पर समुद्र में डाल दिया। जब प्रलय हुई तो उस मछली ने मनु से कहा, ''एक बड़ी नौका में आप बैठ जाएं''। मनु ने अपनी नौका उसके दांतों से बांध दी। वह मछली बड़ी तेजी से उस नौका को अपने साथ खींच ले गई। तब उसने कहा, ''आप अपनी नौका एक पर्वत शिखर से बांध दीजिए।'' उस शिखर का नाम बंधन शिखर प्रसिद्ध हो गया। मछली ने कहा, ''मैं प्रजापति ब्रह्मा हूं, मनु द्वारा अब सर्व सृष्टि की उत्पत्ति होगी।'' फिर मछली अंतर्ध्यान हो गई और मनु ने सृष्टि का प्रारंभ किया।

(5) महाभारत के आदि पर्व में सृष्टि का वर्णन न कुछ अलग से तरीके हो गई और मनु ने सृष्टि का प्रारंभ किया।

(6) महाभारत के आदि पर्व से सृष्टि का वर्णन न कुछ अलग तरीके से बताया गया है। उसमें लिखा है कि ब्रह्मा के छः पुत्र मनुष्य रूप में थे। मरीच, अंगिरा, पुलस्त्य, प्रलय और कृतु मरीच के पुत्र काश्यप हुए, उन्हीं से सब जीवधारी पैदा हुए।

(7) रामायण के दूसरे कांड में सृष्टि वर्णन इस प्रकार है। वशिष्ठ ने राम से कहा, ''आदि में पानी के अतिरिक्त कुछ नहीं था। पहले पृथ्वी बनी फिर ब्रह्मा खुद मनु के रूप में बने। उन्होंने वाराह (सुअर) का रूप रखकर पाताल से पृथ्वी को निकाला और अपने लड़कों द्वारा सृष्टि की उत्पत्ति की। ब्रह्मा जो कि अमर हैं, आकाश से पैदा हुए काश्यप के वैवस्वत और वैवस्वत के पुत्र मनु हुए। मनु पहले सृष्टि के बनाने वाले प्रजापति थे। मनु के इक्ष्वाकु हुए जो अयोध्या के राजा थे।

(8) रामायण के तीसरे कांड में सृष्टि की कथा इस प्रकार बताई गई है कि जटायु ने राम से कहा, ''प्रजापति गण जो सबसे आदि में थे, उनके नाम कर्दम, विकृत, शेष, समस्त्रय, महाबली, बाहुपुत्र, स्थान, मारीचि, अत्रि कृत, पुलस्त्य अंगिरा, प्रचेता, पुलह और कश्यप हैं। दक्ष प्रजापति के आठ लड़कियां थीं। वे काश्यप को ब्याहीं गईं। उनमें से मनु नामक स्त्री से सब मनुष्य पैदा हुए। ब्राह्मण मुख से, क्षत्रिय वक्षस्थल से, वैश्य जंघा से और शूद्र पैरों से उत्पन्न हुए। अनल नामक स्त्री से वृक्ष पैदा हुए। प्रचेता से बाल्मीकि पैदा हुए, जिन्होंने रामायण का लेखन किया था।

(9) विष्णु पुराण में सृष्टि कथा इस प्रकार है कि आदि में हिरण्यगर्भ में ब्रह्मा थे। उसके दाहिने अंगूठे से प्रजापति दक्ष उत्पन्न हुए। दक्ष के अदिती नामक एक लड़की थी। उससे वैवस्वत पैदा हुए और वैवस्वत के मनु, मनु के इक्षवाकु, इक्षवाकु के दिलीप, दिलीप के रघु और रघु के अज, अज के दशरथ, दशरथ के राम, राम के लव व कुश, कुश के कृत्य पैदा हुए।

वैवस्वत के पुत्र मनु ने पुत्र प्राप्ति की इच्छा से तपस्या की। परंतु गलती से पहले दढ़ा नाम की लड़की पैदा हुई। फिर मित्र और वरूण, जो कि चंद्रमा का लड़का बताया है। की कृपा से मनु के एक पुत्र उत्पन्न हुआ। महादेव के श्राप से मनु स्त्री हो गया। और वह सोम के पुत्र बुध (जिसे चंद्रमा का भी लड़का बताया है) मुनि के आश्रम पर गई। बुध उस स्त्री पर आशक्त हुए, जिससे एक परुरवा नामक पुत्र पैदा हुआ। वह अपने गुरु की गाय का वध करने के कारण श्राप से शूद्र हो गया। स्त्री (मनु) के पुत्र कश्यप से क्षत्रिय और नाभि से वैश्य पैदा हुए।

(10) सबसे माननीय प्रमाण मानव शस्त्रान्वेषण का था। पहला अनुसंधान सर हर्बर्ट रिझले ने सन् 1901 में किया। उनका कथन है कि भारत की जातियां आर्य, द्रविण, मंगोल और सोथियन का मिश्रण है।

सन् 1936 में डॉ. गुहा ने पुनः अनुसंधान किया। उनके अनुसार भारतीय दो जातियों के हैं। पहले लंबे सिर वाले और दूसरे छोटे सिर वाले। पश्चिम में मेडिट्रेनियन के लोग लंबे सिर वाले और आल्पस प्रदेश के लोग छोटे सिर वाले थे।

मैडिट्रनियन के लोग यूरोप में रहते थे और वे आर्य भाषा बोलते थे। आल्पस एशिया के हिमालय प्रदेश में छोटे सिर वाले लोग रहते थे तथा वे आर्य भाषा नहीं बोलते थे।

(11) विज्ञान ने जिस प्रकार ब्रह्मांड की सीमा निश्चित नहीं हैं, उसी प्रकार दलित जातियों के इतिहास की सीमा निश्चित नहीं है। जिस प्रकार ब्रह्मांड में सूर्य चमकता है, उसी प्रकार दलित जातियों का राजा शंबर नरेश प्राचीन इतिहास में देदीप्यमान है। जिस प्रकार विज्ञान ने अनेकों सूर्य होने की कल्पना की है। उसी प्रकार इतिहास में शंबर नरेश के अलावा हड़प्पा में (सिंधु घाटी की सभ्यता में) रहे होंगे। किस प्रकार नष्ट किया गया है। यह तथ्य अभी सामने नहीं आया है।

ईसा से 2500 ई. पू. में आर्यों की पहाड़ी जातियों में पुरहूत को अपना सेनापति चुना जाता था और उसे इंद्र की उपाधि दी जाती थी। वे पहाड़ी जातियां पुरु, कुरु, गंधार मद्र, भल्ल, शिव उशीनार थीं। इंद्र वर्ष भर में केवल एक घोड़े का मांस खा सकता था। इस प्रकार आर्यों ने इंद्र पर सामाजिक प्रतिबंध लगा रखा था। आर्य लोग संगठित होकर भारत पर हमला करते थे। परंतु हार जाते थे।

आर्यों के आने के पहले भारत का नाम क्या था यह हर किसी को मालूम है। आर्यों के आने पर भारत का नाम आर्यावर्त पड़ा। मुसलमानों के आने पर हिंदुस्तान और अंग्रेजों के आने पर इंडिया नाम पड़ा।

आर्य लोग भारतवासियों को असुर कहते थे। असुर का अर्थ है बिना सुर का अर्थात बिखरे हुए लोग या ऐसे लोग जो सुरा (शराब) का सेवन नहीं करते थे। आर्यों और असुरों में ईसा से 108 वर्ष पहले युद्ध हुआ जो प्रथम युद्ध था।

शंबर भारत के मूलनिवासियों का राजा था। जिसकी राजधानी शंबर पुर थी। पांचाल देश शंबर के राज्य में था। वह बहुत ही शूरवीर पुरुष था। शंबर का कवच स्वर्ण खंचित लोहे का बना हुआ था। उसने कई बार आर्यों को परास्त किया।

भारत में आर्यों के आक्रमण के समय शंबर नरेश बूढ़ा हो चला था। उसके चार औरतें, 16 पुत्र, 9 पुत्रियां थीं। कहीं पर उसके 100 गढ़ पत्थरों के बने और कहीं पर 99 गढ़ तांबे के बने होने का उल्लेख मिलता है।

पुरहूत के मरने के बाद आर्यों ने दिवोदास को अपना इंद्र चुना। इंद्र एक पदवी होती थी। आर्यों के सेनापति का पर्यायवाची शब्द इंद्र था। देवोदास के नेतृत्व में आर्यों ने जब शंबर नरेश से युद्ध किया तो उसे युद्ध में विश्वामित्र न वक्ष, लोमा, मुद्रा और रोहिणी को बंदी बनाया गया। शंबर नरेश ने विश्वामित्र से पूछा कि अगस्त्य हमारे लोगों की हत्या क्यों करता हैं? वह हमारे राज्य के लोगों को मारकर रक्त क्यों पीता है? विश्वामित्र ने कहा कि आपके सरदार भी तो आर्यों को पकड़कर जौ और दूध के साथ पकाकर नित्य खाते हैं।

लोमा, मुद्रा और रोहिणी इतनी सुंदर थीं किं शंबर नरेश के सरदार उनके रूप पर मोहित होकर उन्हें पाने के लिए आपस में युद्ध करने लगे थे। अगस्त्य ने दिवोदास के नेतृत्व में शंबर नरेश पर हमला किया तो शंबर के सरदारों ने उक्त नारियों के कारण युद्ध नहीं किया, जिससे शंबर मारा गया। अगस्त्य ने इस प्रकार भारत की धरती पर विजय प्राप्त की थी।

आर्य लोगों पर भी इस प्रसंग में प्रकाश डालना उचित होगा। आर्य लोग जुआ खेलते, शराब पीते और भारतवासियों की लूट करते थे। उनके लोग कबीलों और गांवों में आग लगा देते थे। वरुण के दो पुत्र थे। एक का अगस्त्य और दूसरे का नाम वशिष्ठ था। अगस्त्य की पुत्री का नाम रोहिणी था और उसकी शादी दिवोदास से की गई। फिर उसकी शादी विश्वामित्र से हुई। दिवोदास के मरने के बाद सुदास इंद्र बना रहा।

(12) बुद्ध काल में राजा बिंबिसार के राज्य वैध जीवक ने बुद्ध धर्म का प्रचार किया था। बुद्ध को देवता का रूप देने में अश्वघोष और सरहपाद नाम के ब्राह्मणों का हाथ था। जिन्होंने अपने साहित्य से बुद्ध को पलायनवादी घोषित किया, विशेषकर अश्वघोष ने बुद्ध काल में शाक्यों और कोलियों का राज्य रोहिणी नदी के दोनों और अलग–अलग रहा था। पुष्यमित्र शुंग ने बुद्ध को पलायनवादी सिद्ध करने के लिए तीन ग्रंथ बनाए –

1. निदान कथा, 2. ललित विस्तार और 3. बुद्ध चरित।

भारत से बौद्ध धर्म की जड़ें उखाड़ने का श्रेय शंकराचार्य को है। शंकराचार्य ने बौद्ध धर्म को नष्ट करके हिंदू धर्म बनाया। हिंदू धर्म भारत में आठवीं सदी के बाद आया। मुसलमानों ने भारतवासियों को हिंदू शब्द दिया। हिंदू का अर्थ सिंधु है। आर्य सिंधु नदी के किनारे फैले हुए थे। हिंदू शब्द और सरहपाद का जन्म समकालीन है। राजा धरमपाल के समय सरहपद का जन्म सन् 678 से सन् 809 के बीच हुआ था। सरहपाद, सरोज, बृज, राहु ब्राह्मण से बौद्ध बने, इसलिए उनके परिवार में नारी जाति को सम्मान नहीं दिया जाता था। हिंदू की मूर्ति पूजा के कारण बौद्ध भिक्खु भी चमत्कार और तंत्र साधना करने लगे थे। रनिवासों में चमत्कारी साधुओं की अधिक कद्र की जाती थी। जो मोहिनी मंत्र के कारण स्त्री संभोग करते थे, ऐसे लोगों में सरहपाद भी राजा धरमपाल द्वारा सम्मानित किए गए।

सरहपाद ने बाण बनाने वाली बहेलिया जाति की लड़की से बौद्ध बनने के पहले विवाह किया था। जो चौरासी सिद्धों में सर्वप्रथम थी। सरहपाद ने दलित जातियों में मूर्तिपूजा का जहर इसलिए घोला कि वे बौद्ध धर्म से अलग रहें। सरहपाद के कारण ब्राह्मणों ने बुद्ध के स्थान पर दुर्गा, काली, शारदा, लालता, सरस्वती, कल्याणी देवी संतोषी, आदि देवियों को बनाया।

यह प्रमाणित है कि जहां–जहां आज हिंदू मंदिरों को खोदा जाता है, वहां बौद्ध अवशेष पाए जाते हैं। सरहपाद के शिष्य शवरया और नागार्जुन थे। हिंदुओं की चौरासी सिद्धों के आधार पर कथाकथित चौरासी लाख योनियां और चौरासी आसन हैं। जो कि सिद्ध परंपरा के बाद लिखे गए ग्रंथों में मिलते हैं। जैसे –

1. **शवराया** कोल या भील जाति के थे।
2. **महीया** आठवां स्थान चौरासी में शूद्र थे।
3. **कंकालिया** नवां स्थान चौरासी में शूद्र थे।
4. **खड़गया** चौरासी में 59वां स्थान शूद्र होकर मगध के शूद्र थे।
5. **शीलया** सन् 974–1025 के बीच जन्में जो मगध के शूद्र थे।

6. **चमरिया** 84 में 19वां स्थान होकर शूद्र थे।

7. **श्रंगालीपाद** शूद्र होकर संस्कृत के विद्वान थे।

8. **जोगिया** बिहार के रहने वाले भंगी जाति के थे इनकी लिखी पुस्तक 'चित्र संप्रदाय व्यवस्थापन' तंजौर में है।

9. **चैतुकथा** यह शूद्र जो भागलपुर में रहते थे।

10. **चर्पतीपा** यह कहार होकर भागलपुर के वासी थे।

11. **पुतलीया** शूद्र थे और बौद्ध बने जो पीपल के नीचे रहते थे।

सिद्धों की तरह मुसलमान संत दरवेश कहलाते थे। उन्होंने सूफी मत का प्रचार किया। ब्राह्मणवाद ने चौरासी योनियों और आसनों की जो कल्पना शास्त्रों में की वह इन्हीं सिद्धों पर आधारित है। जो 84 परंपरा के बाद लिखे गए ग्रंथ आम जनता को शिक्षा न देकर ब्राह्मणों और मुसलमानों ने केवल भ्रमित कर अपनी सत्ता जमाए रखी थी। आम जनता में शिक्षा का कार्य बौद्ध धर्म में जीवित रहा था। जब भारत में अंग्रेज आए तब शिक्षा का जो प्रसार हुआ। भारतीय इतिहास में अंधकार का युग दलित इतिहास का युग है।

बारहवीं शताब्दी में आल्हा (अलहण) नामक शूरवीर, बलवान, शूद्र हुआ था। परंतु ब्राह्मण व्यवस्था ने उसे शूद्र न मानकर क्षत्रिय मानकर महत्त्व दिया। उसने सन् 1162 में दिल्ली के शासक पृथ्वीराज चौहान की आंखें निकाल ली थीं, जबकि भारतीय इतिहास में मुहम्मद गोरी वर्णित है। इस लड़ाई में कन्नौज के राजा जयचंद्र का सेनापति धनुआ तेली भी मारा गया। जयचंद्र बौद्ध राजा था। जो वेद पुराण तथा ब्राह्मणवाद व्यवस्था का गुलाम होने से वीर कहा गया। राणा सांगा ने पत्र लिखकर बाबर को भारत में बुलाया तथा आक्रमण करवाया पर उसे गद्दार नहीं कहा गया, क्योंकि वह ब्राह्मणवादी था।

मुगल सम्राट अकबर को कुशल शासक और योग्य बताया गया है, जबकि वह पढ़ा–लिखा नहीं था। उसने हिंदू कन्याओं के साथ विवाह किया तथा बीरबल और टोडरमल (दो ब्राह्मणों) का अपने मंत्रिमंडल में सम्मिलित किया। उसके राज्य में एक शूद्र दशनाथ बड़ा चित्रकार था, जिसकी धरोहर और कला प्रसिद्ध रही है।

ब्राह्मण अपने मनमाने तरीके से सामाजिक व्यवस्था को बनाते रहे। क्योंकि वे राज्य के मंत्रिमंडल में सम्मिलित रहे हैं। उन्होंने मनुवादी व्यवस्था के कारण प्रशासन की दंड संहित ऐसी रखी जो उन पर लागू न होकर भारत के मूलनिवासी (जो बौद्ध धर्म के मानने वाले थे) पर लागू रही। जिससे अपने हित और शूद्रों का अहित हो। इस प्रकार के लेख लिखते रहे। साथ ही वेद, पुराण, स्मृति, उपनिषद रामायण आदि राजाओं के संरक्षण में लिखते रहे थे। उनके अंधविश्वासों को शूद्रों ने न माना जिससे उनके अधिकारों का सदा हनन किया गया।

मीराबाई संत रविदास की शिष्या थी। इसलिए ब्राह्मणी समाज ने उन्हें रविदास से निकालकर पत्थर की मूर्ति के सामने फेंक दिया। और नाच करने को मजबूर कर दिया। जैसी हालत शूद्र की थी वैसी ही हालत ब्राह्मणी समाज ने स्त्री की कर दी है।

भारत में चाहे आर्य बाहर से आए हों चाहे तुर्क, मंगोल, मुस्लिम, हूण, अंग्रेज, पारसी, फ्रांसीसी आदि। उन्होंने आक्रमण किए। परंतु धन्य है उन भारतीय मूल निवासियों को, जिन्होंने कभी उनसे लड़ने में हार नहीं मानी। देश के बाहर से आने वाले लोगों के रीति–रिवाजों का असर उनके दिलो दिमाग में हमेशा के लिए नहीं हो सका। भारतीय मूलनिवासी अपने सम्मान व इज्जत के लिए मर मिट सकते हैं। मुस्लिम शासन में ब्राह्मण भीख मांगते थे, कायस्थ राज–सत्ता से चिपके हुए थे। पर आज ब्राह्मणों की माली हालत बहुत अच्छी है। वे इस देश में सम्मान के पात्र हैं ही। वह राज–सत्ता भी हथियाए हुए हैं। वे नहीं चाहते कि दूसरा वर्ग उसका उपभोग करे। वे अपने कुचक्र एवं चालाकी से पूरे देश में हावी हैं। दूसरों को आंदोलनों की आंधी में झोंक कर, स्वयं मूक–दर्शक बनकर अन्य लोगों को गुमराह करते हैं।

भारतीय आदिवासियों के आंदोलन तभी से शुरू हुए जब से भारत में विदेशियों का पदार्पण हुआ। जब तक उन्हें वास्तविक स्वतंत्रता नहीं मिल जाती, तब तक ये संघर्ष निरंतर चालू रहेंगे। महान शासक अकबर ने रानी दुर्गावती के साथ हुए युद्ध में मंत्री आधार शाह की मांग की थी। रानी के मना करने पर ही युद्ध हुआ। रानी का मंत्री आधार शाह कायस्थ जाति का था।

आदिवासियों का गौरवशाली इतिहास मध्य भारत के गौडवाना क्षेत्र में शुरू हुआ था। बादशाह शाहजहां के समकालीन हृदयशाह ने गढ़ा से अपनी राजधानी हटा कर मंडला को राजनगर में बनाई थी। सम्राट अशोक के शिलालेखों से प्रेरणा लेकर गौड़ वंशावली को रामनगर के किले की प्राचीर पर खुदवा दिया था। गौड़ लोग लकड़ी की कला का काम किया करते थे। वे रण प्रशस्ति के गीत गाया करते थे, गायों का हल जोतते थे। वहीं गौड़ आज कल बढ़ई कहे जाते हैं। गोदावरी से 40 मील की दूरी पर महलगांव में गौड़ लोग पटेल थे। उनमें से एक जोधाराय नाम का एक लड़का गढ़ा में नागदेव के शासन के समय गया, नागदेव की पुत्री के स्वयंवर में उसे वर चुना गया। यह घटना सन् 382 की है। रत्नावली इसी जोधाराय ने कलचुरियों की राजधानी त्रिपुरी को लड़कर जीत ली तथा वहां का शासक बन गया। यह गौड़ों का प्रथम राजा माना जाता है। गौड़ लोग म.प्र. के दामोह जिले के सिलपरी गांव में आज भी रहते है। गौड़ों का कई पीढ़ी तक राज्य चला, परंतु जिस प्रकार शंकर ने पार्वती के चक्कर में आदिवासियों पर आर्यो की हूकुमत कायम करवाई, उसी प्रकार संग्रामशाह के पुत्र दलपतिशाह ने चंदेल कन्या दुर्गावती के चक्कर में उस राज्य को छिन्न–छिन्न कर दिया। गौड़ों की 33वीं पीढ़ी में मदनशाह ने जबलपुर में मदन महल नाम का किला बनवाया। मदन शाह ने अपनी वीरता से पृथ्वीराज और महोबे के राजा परिमर्द (परमाल) को हरा दिया था। आज उसी किले में शराबी, जुआरी तथा पेशेवर अपराधी अपना अड्डा बनाए रहते हैं या रखे जाते हैं ताकि गौड़ों का नामोनिशान मिटा दिया जाए। ऐसे स्थान पर कोई भी सज्जन पुरुष नहीं पहुंच सकता, जिससे गौड़ों के इतिहास से परिचित न हो सकेगा। अन्यथा कहीं गौड़ों को भड़काने का कार्य कर दे।

गौड़ राजाओं में संग्राम शाह ऐतिहासिक पुरुष रहा। बौद्ध धर्म के पराभव के बाद एक नई उपासना का उदय हुआ। जो बौद्ध आर्यों की मिली–जुली देन थी। तथा बौद्ध परंपरा सिद्धों के हाथ में चली गई। पूरे भारत देश में आर्यों ने मठ और मंदिर बनवाए तथा सीधे–सीधे आदिवासियों को ठगने लगे। महोबे के राजा चंदेल और गौड़ राजा मनियां देवी को मानते थे। इस कारण दोनों में आपसी घनिष्ठ संबंध थे। सन् 1543 में गौड़ राजा दलपति शाह ने कोतिराय की बेटी दुर्गावती के कारण महोबे पर चढ़ाई की तथा उससे विवाह कर लिया। ब्राह्मण लोगों ने शासक अकबर को बताया कि दुर्गावती अत्यंत सुंदर है, इसलिए उसने आक्रमण किया, पर वह हार गया। युद्ध में रानी की आंख और सीने में गोली लगने से घायल हो गई। उसने अपनी लज्जा बचाने के लिए अपनी ही कटारी से तब निजहत्या कर ली। जब एक ब्राह्मण ने सूचना दी कि उसका पुत्रवत सैनानी अर्जुनदास मारा गया। इस प्रकार ब्राह्मण का हाथ गौड़ों का नाश कराने में रहा, क्योंकि गौड़ लोग ब्राह्मण व्यवस्था को नहीं मानते थे।

रानी दुर्गावती के बाद गौड़ राजा चंद्रशाह सन् 1610 ईसवी में राजा हुआ। उसके बाद उसका पुत्र प्रेमशाह, फिर उसका पुत्र दुर्जन शाह राजा बना। हृदय शाह को हराया। हृदय शाह की सन् 1681 में मृत्यु होने पर उसका पुत्र छत्रशाह उसके बाद सन् 1691 में नरेंद्र शाह राजा बना। उसके मरने पर सन् 1731 में उसका पुत्र महाराज शाह गद्दी पर बैठा। महाराज शाह के मर जाने पर सन् 1757 ईसवी में उसका पुत्र दुर्जन शाह राजा बना। सन् 1857 में शंकर शाह ने वीरता का परिचय दिया। इस प्रकार गौड़ लोगों ने 64 पीढ़ी राज्य किया। उनका इतिहास भारतीय आदिवासियों के लिए एक प्रेरणा स्त्रोत है। ये तथ्य दलित दस्तावेज नामक पुस्तक की मदद से लिया गया है, जिसके लेखक श्री एस. आर. विद्रोही हैं।

दलित नारियों का स्वतंत्रता संग्राम में सहयोग

झांसी का इतिहास महारानी लक्ष्मीबाई से जोड़ा गया है। लक्ष्मीबाई के पति गंगाधर राव की मृत्यु 21 नवंबर सन् 1853 में हुई। अपने अंधविश्वास को कायम रखने के लिए रानी ने अंग्रेजों से अनुमति मांगी, परंतु काशी जाकर बाल कटवाने की अनुमति लक्ष्मी बाई को नहीं मिली। जब लक्ष्मी बाई ने झांसी राज्य की बागडोर अपने हाथ में संभाली थी। उसी समय लक्ष्मी बाई की सेना के कोषागार में एक पूरन नाम का कोरी कार्यरत था। पूरन कोरी की पत्नी का नाम झलकारी बाई था। वह रानी लक्ष्मी बाई की हमशक्ल थी। झलकारी बाई रानी लक्ष्मी बाई से कई गुना वीर थी। 10 मई 1857 के मेरठ की लड़ाई में झलकारी बाई ने अपने पति के साथ अंग्रेजों में जंग खेली थी। महीनों जंग चली। इसी जंग में उसका पति पूरन कोरी मारा गया था। झलकारी बाई को बड़ी चिंता थी कि कहीं लक्ष्मी बाई अंग्रेजों के समक्ष सपर्मण न कर दें। इसलिए उसने रानी लक्ष्मी बाई को झांडेरी फाटक से कुछ सिपाहियों के साथ ग्वालियर की तरफ बाहर निकाल दिया। वह स्वयं जंग में लड़ती रही। अंग्रेज उसे लक्ष्मी बाई ही समझते रहे। युद्ध भूमि में जब उसे यह सूचना मिली कि उसका पति पूरन कोरी भी शहीद हो गया है। वह अपने पति के पास गई कि अचानक उसके सीने में गोली और भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में शहीद हो गई। भारतीय इतिहास में उसका नाम स्वार्णिम अक्षरों में इसलिए लिखा जाएगा, क्योंकि वह दलित समाज की नारी थी। वह रानी थी, न उसके पास राजमहल था, परंतु स्वतंत्रता संग्राम में उसने अपने प्राणों की बाजी लगा दी।

भारतीय आदिवासी वीरांगना महावीरी देवी जो भंगी जाति की थी। वह मुंडभर भाजू, तहसील करोना, जिला मुजफ्फर पुर (उ.प्र.) की रहने वाली थी। वह अनपढ़ होने पर भी बड़ी कुशाग्र बुद्धि थी। उसका नाम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों में प्रसिद्ध है। उसने 22 नारियों की एक सेना बनकर अंग्रेजों से युद्ध किया। वह युद्ध में शहीद हुई। इस प्रकार तमाम आदिवासी नारियों व पुरुषों ने स्वतंत्रता संग्राम में अपने को उत्सर्ग कर दिया, परंतु उनके नामों को उजागर करने में इतिहासकारों ने अपनी कलम नहीं चलाई। खेद इस बात का है कि दलित जातियों के महान वीरों का नाम इतिहासकारों ने सदा छिपाया है। ऊंची–ऊंची अट्टालिकाओं का सौंदर्य उसकी नींव की ईंट पर भी निर्भर है। हमें गौरव इस बात का है कि भारतीय स्वतंत्रता की उपलब्धियों में हमारी वीरांगनाओं और दलित व पिछड़ी जातियों के तमाम पुरुषों का योगदान रहा है। भले ही उनके नाम प्रकाश में नहीं आए हों, परंतु उनके योगदान इस स्वतंत्रता रूपी महल के खड़े होने में गौरव प्रदान करता है।

आज हमारे देश में जितने भी राजनीतिक दल हैं, उन सभी के राष्ट्रीय अध्यक्ष ब्राह्मणवादी 15% के लोग है, वे सभी दल 85% लोगों के लिए कोई सांपनाथ का तो कोई नागनाथ का कार्य करते हैं। सभी के सभी गांधीवादी हैं। और सभी गांधीजी के गीत (ईश्वर अल्लाह एक ही नाम सबको सन्मति दे भगवान) के नारे लगाते है किंतु वास्तव में काम उल्टे ही करते हैं। जैसा कि 6 दिसंबर सन् 1992 की 'राम मंदिर व बाबरी मस्जिद' घटना से साबित होता है। क्योंकि अगर ईश्वर अल्लाह एक हैं तो फिर हिंदू नेताओं ने बाबरी मस्जिद को क्यों ढहा दिया। इससे लगता है कि हिंदुओं को (15:) ईश्वर और अल्लाह से कोई वास्ता नहीं तो अपना चातुर्वर्णी धर्म ही होना चाहिए, जिससे 15: सुख के साथ और 85: दुख के साथ जीवन व्यतीत करते रहें।

आदिवासियों के विद्रोह आंदोलन

आदिवासियों बिरसा मुंडा (रांची बिहार, वर्तमान राजधानी–झारखंड) का आंदोलन सन् 1874 में हुआ। सन् 1818 से लेकर 1848 तक भील लोगों ने मालवा प्रदेश में अंग्रेजों के समय आंदोलन किए। अंग्रेजों के साथ सन् 1818 से 1850 तक कोली लोगों ने कोली विद्रोह किया। सन् 1829 से कई वर्षों तक खासी जाति के आदिवासियों ने अंग्रेजों से विद्रोह किया। मान भूमि लोगों और खोंद लोगों ने सन् 1832 से 1858 तक अंग्रेजों के साथ विद्रोह किया। अंग्रेजो से आदिवासियों ने कई वर्षों तक लड़ाइयां लड़ीं।

एक खुसक भंगी गुजरात का रहने वाला था। ब्राह्मणों के अन्याय व अत्याचारों से तंग होने पर मुसलमान बन कर रहने लगा। वह अलाउद्दीन की सेना में भर्ती हो गया तथा अलाउद्दीन के पुत्र मुबारक खां का साथी बन गया। उसने मुबारक खां के बादशाह बनने तक अपने समस्त परिवार को अपने पास बुलाकर अपने साथ रखा। उसने 13 अप्रैल सन् 1320 को मुबारक खां का गला काटकर मार दिया और दिल्ली की गद्दी का शासक बना।

आज की पूंजीवादी सरकार जातीय स्वार्थ की भावना के कारण ऐसी कोई बात प्रकाश में नहीं आने देती, जिससे आने वाली पीढ़ियां शासन पाने के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा पा सकें। सन् 1857 के विद्रोह में लोचन ने कानपुर में प्रमुख भूमिका निभाई थी। लोचन मल्लाहों का मुखिया था।

साभार : भारतीय अचम्भा
(पृष्ठ सं० 52 से 59 तक)
उमेश कुमार एडवोकेट

तेली शूद्र एवं बौद्ध थे

तेली जाति के पूर्वज तेल के जनक थे जिन्होंने सरसों के दाने से तेल निकाल दिया उसके बाद तिल्ली, गुल्हू, अलसी, गरी आदि दानों से भी तेल निकाल दिया। जिससे बने सब्जी पकवान आदि खाकर सम्पूर्ण मानव जाति स्वस्थ और तन्दुरूस्त हो गया हमारे पूर्वज तेल के आविष्कारक तो थे परन्तु अनपढ ही थे अपने खेतों में सरसों की खेती करके दाने निकाल कर अपने घर पर ही काठ के कोल्हू और एक बैल द्वारा तेल निकालते थे चूँकि एक गाँव में 2–3 परिवार ही होते थे इसलिए अपने तेल को अपने गाँव के ही समाज जाति के लोगों को देते थे लेकिन अनपढ़ और गरीब होने के कारण गाँव के बाहर शहरों में जाकर तेल का व्यापार करने में असमर्थ थे।

चूँकि मानव जाति को चार वर्णों में विभाजित किया गया है। जिसमें ब्राह्मण शिक्षा देने का कार्य करते थे क्षत्रिय अस्त्र शस्त्र चलाने तथा राज्य का शासन चलाने का कार्य करते थे तीसरा वैश्य वर्ण ही केवल व्यापार करता था। चौथा वर्ण शूद्र सभी जीवनोपयोगी वस्तुओं का निर्माण और उत्पादन भी ब्राह्मण, क्षत्रिय वर्ण की सेवा करते थे। फिर भी उपरोक्त तीनों वर्णों द्वारा उपेक्षित तिरस्कृत तथा अपमानित, आविष्कारक होने के बावजूद भी सम्पन्न और खुश था।

लेकिन शूद्र वर्ण तेली की समानता और खुशी को वैश्य बर्दाशत नहीं कर पाये। और एक योजना के तहत तेली जाति को बहकाकर, अधिक लाभ का लालच देकर दूसरे वर्णों के द्वारा अपमानित होने से बचाने की बात कहकर तेली का पूरा तेल लेकर बयाना के तौर पर कुछ पैसे देकर तेल लेकर शहर जाकर ऊँचे कीमत में बेचकर भारी लाभ कमाते थे और उत्पादन कृषक तेली को कम पैसा देकर राजी कर लेते थे। इस प्रकार वैश्य समाज तो खूब फलने–फूलने लगा किन्तु अनपढ, शुद्र उत्पादक तेली गरीबी का शिकार होता रहा। कुछ समय पश्चात शूद्र तेली की खेती पर कब्जा करके उपरोक्त तीनों वर्णों ने योजना के तहत अधिक कंगाल कर दिया। और वैश्य वर्ग का व्यापार करना मुख्य पेशा होने के कारण सम्पन्नता बढ़ती गई।

इसी प्रकार आज भी शूद्र वर्ण की तेली जाति को पूर्व नियोजित योजना के तहत वैश्य वर्ग द्वारा तेली जाति को भी वैश्य बताया जा रहा है तथा शूद्र तेली का सरकार द्वारा प्रदत्त पिछड़ा वर्ग का 27% प्रतिशत आरक्षण भी छिनवाने का प्रयास वैश्य वर्ण द्वारा किया जा रहा है। ऐसी स्थिति में तेली समाज द्वारा वैश्यों से बचते तथा झूठे प्रलोभनो से दूर रहने की आवश्यकता है। आप लोगों से अनुरोध है कि तेली जाति शूद्र है न कि वैश्य। क्योंकि–

भारतीय समाज में असमानता का विष घोलने वाले ब्राह्मण धर्मग्रन्थ मनुस्मृति के अध्याय 4 में श्लोक 84 में लिखा है ''न राज्ञः प्रतिगृहणियादि राजन्य प्रसूतिनः।
सूनाचक्र ध्वजवंता वेशैतैव च जीवताम।।''

अर्थात् जिस राजा का जन्म क्षत्रिय से ना हो उसका दान न लें, पशु मारकर मांस बेचने वाले कसाई, तेली, कलाल (कलवार) या जायसवाल एवं वेशोपजीवी से भी दान न ले।

इस श्लोक से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि ब्राह्मणों ने तेली, कलवार या जायसवाल को वैश्य न मानकर वेशोपजीवी या कसाई की श्रेणी में रखा जाता है। यदि तेली जाति वैश्य होती तो तेली के बजाय सम्पूर्ण वैश्य जातियों के लिए ऐसा लिखा जाता –

तेली समाज के राजाओं छत्रपति शिवाजी के वंशज पौत्र छत्रपति शाहू जी महाराज (यशवन्त जयसिंह राव घाटगे) का राजतिलक ब्राह्मण वर्ण ने करने से इन्कार कर दिया था क्योंकि मनु स्मृति में ऐसे सजा के बारे में लिखा है कि दस बधिक बराबर एक तेली, दस तेली बराबर एक कलाल था कलवार या जायसवाल और एक जायसवाल बराबर एक वैश्य और दस वेशोपजीवी बराबर एक राजा होता है। यहाँ राजा का तात्पर्य ऐसे राजा से है, जो क्षत्रिय से उत्पन्न न हो।

ब्राह्मणों ने भारतीय समाज में शूद्र वर्ण को छोड़कर किसी भी दूसरे वर्ण को अपमानित करने के लिए किसी ग्रन्थ में नहीं लिखा है। यदि ब्राह्मणों द्वारा भारतीय समाज में तेली को वैश्य वर्ण में रखा होता तो कभी किसी भी धर्म ग्रन्थ में अपमानित नहीं किया गया होता– ब्राह्मण धर्म ग्रन्थ रामचरित मानस में ब्राह्मणों ने उन्हें (तेली) को अपमानित करने के लिए लिखा है –

''जो वर्णाधम तेली कुम्हार/स्वपच किरात कोल कलवारा।''

अर्थात तेली कुम्हार किरात (निषाद) कलवार आदि अधम वर्ण के हैं। तेली जाति का आदमी उपरोक्त पढ़कर स्वर्ग पाने की कामना करता है वह यह सोचता ही नहीं है कि उसकी जाति को गाली दी गई है एक तरफ तेली को अधम वर्ण शूद्र घोषित किया है और दूसरी तरफ शूद्रों के लिए लिखा है –

''ढोल गँवार शूद्र पशु नारी ये सब ताड़न के अधिकारी।'' इस तरह कदम–2 पर तेली, तमोली, कुम्हार, जयसवाल, अहीर (यादव) खटिक निषाद आदि को अपमानित किया गया है।

ब्राह्मणों ने तेली (शूद्र) जाति को अपमानित करने के लिए प्रचारित किया कि प्रातकाल तेली का मुँह देखना अशुभ होता है जबकि तेली ही जाति के ही कोल्हू और बैल से सरसों से तेल निकालने का काम करते थे उसी तेली के तेल का प्रयोग ये ब्राह्मण अपने घरों में जन्म, मुन्डन, विवाह, जनेऊ आदि संस्कारों एवं धार्मिक अनुष्ठानों में करते हैं तब कहीं अशुभ नहीं मानते।

यद्यपि भारतीय इतिहास में तेली (गुप्त वंश) युग था जो प्राचीन भारत में स्वर्ण युग कहा गया है। गुप्त सम्राटों का शासनकाल भारतीय इतिहास में असाधारण, वैभवपूर्ण, विशाल, संस्कृति का युग था। गुप्त वंश के संस्थापक पाटलिपुत्र के सम्राट चन्द्रगुप्त प्रथम 319–204 प्रयाग तक अपने साम्राज्य का विस्तार किया था उनके पुत्र समुद्रगुप्त ने पूर्व में ब्रह्मपुत्र उत्तर में हिमालय और कश्मीर तथा दक्षिण भारत में भी विजय प्राप्त की थी। उनके बाद चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य, कुमार गुप्त प्रथम, स्कन्दगुप्त आदि महान सम्राट हुए इस प्रकार तेलियों का शासन (गुप्त वंश) (320 ई० से 600 ई० तक) 280 वर्षों तक भारत में रहा था।

तेली जाति मूल रूप से खत्ती समुदाय (खेती करने वाला समुदाय) का, अभिन्न अंग है। तेली राजाओं में ही गुप्त वंश का नाम आता है ब्राह्मणों ने जब देश पर आक्रमण किया तो यहाँ के मूलनिवासियों को पराजित करके गुलाम बनाकर वर्ण व्यवस्था बनाई जिसमें यहाँ के मूल निवासियों को असभ्य और शूद्र घोषित किया। 563 ई० पू० वर्णव्यवस्था के अनुसार शाक्यवंशी क्षत्री कुल में सिद्धार्थ गौतम बुद्ध पैदा हुए थे जिन्होंने चर्तुवर्ण व्यवस्था के विरोध में क्रान्ति की। जिससे अधिकार विहीन शूद्र भी राजा बने। तेली जाति के गुप्त वंश ने ब्राह्मणों की वर्ण व्यवस्था का विरोध किया था और बौद्ध धर्म को मानने वाले थे।

साहू का शाब्दिक अर्थ सज्जन अथवा भले व्यक्ति के लिए होता है जातिय अर्थ में साहू शब्द तेली का ह पर्याय है मूलनिवासियों की जाति व वर्ण अलग–2 होते है ऐसी सभी जातियों को ब्राह्मणवादी ग्रन्थों में वणिक व शूद्र घोषित किया गया है। तेली जाति को भी वर्णव्य के अनुसार शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार नहीं थ।

कानपुर में जन्में माननीय घसीटेलाल साहू जी ने ''मानव मानव सब बराबर है– कोई ऊँच नीच नहीं।'' नामक पुस्तक लिखकर ब्राह्मणवाद का घोर विरोध किया था। माननीय साहू जी ने विश्व का भ्रमण करके ब्राह्मणवादी झूठे काल्पनिक ग्रन्थों की पोल खोल दी, प्रमाणों के आधार पर उ० प्र० सरकार केन्द्रीय सरकार मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति, शकराचार्य प्रायो जगदगुरूओं आदि की पार्टी बनाकर अदालत में मुकदमा दायर किया और अपने प्रमाणों के आधार पर मुकदमा जीता था। तब इन ब्राह्मणवादियों ने एक मत होकर उन्हें ''विश्व दार्शनिक'' की उपाधि से सम्मानित किया था। ऐसे महान स्वाभिमानी साहू जी को भी जातिगत रूप में अपमानित होना पड़ा था और इसी स्वाभिमानी भावना ने माननीय जी० एल० साहू को ब्राह्मणवादी संस्कृति का घोर एवं कट्टर विरोधी बना दिया।

आर्य ब्राह्मणों ने नारी जाति का शोषण दमन किया लेकिन इस देश के मूलनिवासी तेली जाति में नारी का सम्मान एवं विधवा विवाह को सामाजिक मान्यता रही है इसलिए यह जाति आर्य वंशज न होकर देश की मूल निवासी वंशज है। तेली जाति का उद्भव खत्तीय समुदाय (खेती करने वाला समुदाय) से हुआ है और यह समुदाय मूलतः बौद्ध संस्कृति या भ्रमण संस्कृति का था। ब्राह्मण संस्कृति तो तेली जाति पर लादी गई है। तेली जाति गुप्त वंश के शासकों ने बौद्ध धर्मी होने के कारण ही अनेक स्तूप चैत्य और विहारों का निर्माण कराया था। जिनमें सारनाथ का धम्मेन स्तूप, नरसिंह गुप्त का, नालन्दा विश्वविद्यालय स्थित बौद्ध बिहार प्रमुख है नक्षशिला का भल्लर स्तूप गुप्तकाल की आरम्भिक रचन है। 300 फीट ऊँचे इस बौद्ध विहार को चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भी देखा था तथा प्रशंसात्मक वर्णन किया है। नालन्दा विश्वविद्यालय की स्थापना में दस हजार स्वर्ण मुद्राएं नालन्दा के आस–पास के तेली जाति द्वारा सहयोग किया गया था। नालन्दा में ''तेलिया भण्डार'' नामक महामानव बुद्ध की इस विशाल प्रतिमा तेली जाति के लोगों द्वारा संस्थापित कराई गई थी। इसीकारण ब्राह्मणों ने चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य म्लेच्छ तक कहा। किन्तु बाद में दान आदि की लालच में ब्राह्मणों ने विक्रमादित्य को विष्णु का अवतार घोषित कर दिया था।

गाँधी पिछड़ी जाति का नहीं था। गुजराती में एक कहावत है कि ''कोढ़ सारो पर मोढ़ नहीं सारो'' इसका अर्थ होता है कि शरीर पर कोढ़ होता है, वह ठीक है, मगर यह मोढ़ ठीक नहीं है। यह कोढ़ से भी ज्यादा खतरनाक है यह कहावत सौराष्ट्र में है, जहाँ पर गाँधी का जन्म हुआ था। गाँधी जनरल कटेगरी का वैश्य बनिया था। (देखिए तेली जातियों को गौरवशाली इतिहास) ले० अर्जुन साहू।

ले० सी० पी० ओमर
ख्योरा, आजाद नगर, कानपुर नगर
मो० : 9305256450

अपने धार्मिक संस्कार ब्राह्मणों द्वारा नहीं, खुद कीजिए।

ब्रिटिश सम्राट जॉर्ज पंचम भारत में काफी दिन रहने के बाद जब इंग्लैंड जाने हेतु मुंबई पोर्ट पहुंचे, तो शाहूजी उनको विदा करने के लिए वहाँ स्वयं मौजूद थे। उस समय सम्राट और उनकी पत्नी ने शाहूजी से हाथ मिलाकर अपनी ओर से हार्दिक आभार जताया। दोनों राजाओं ने एक दूसरे का बड़ा सम्मान किया। जॉर्ज पंचम के साथ शाहूजी के साथ मधुर संबंध थे। लेकिन जनकल्याण की भावना से प्रेरित शाहूजी ने सदा ही विदेशी की बजाए स्वदेशी व्यापार, उद्योग धन्धों को बढ़ावा देने का महत्वपूर्ण कार्य किया था। अछूत समाज में शिक्षा के प्रचार–प्रसार को गति देने का काम सही ढंग से चल रहा था। ब्रिटिश सरकार भारत में अछूत समाज और सदियों से दबी–थकी–कुचली दलित–पिछड़ी जातियों के उद्धार, उनके विकास हेतु शाहूजी द्वारा किये जा रहे अथक प्रयासों से काफी खुश थी और यही वजह थी कि जार्ज पंचम के मन में शाहूजी के लिए काफी सम्मान था। इसलिए शाहूजी बहुत ही प्रसन्न थे। ब्रिटिश राजप्रतिनिधि वुडहाउस भी अछूत समाज में शिक्षा के प्रसार से काफी उत्साहित थे। लेकिन कोल्हापुर रियासत के ब्राह्मणों में अछूतों की शिक्षा के प्रति कोई हमदर्दी नहीं थी। शाहूजी ने सत्यशोधक समाज को पूरा सहयोग देकर उनमें समाज परिवर्तन के कार्य के प्रति नई शक्ति प्रदान की। सत्यशोधक समाज के कार्यकर्ता अब ब्राह्मणों के धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में तथाकथित श्रेष्ठत्व के खिलाफ बहुत ही जोर–शोर से प्रचार करने लगे। इसके लिए उन्होंने सत्यशोधक समाज के अंतर्गत जलसों की बैठकें करनी शुरू कीं। उन्होंने ब्राह्मणों के पुरोहितपन को ही नकार दिया। अब वे अपने धार्मिक संस्कार ब्राह्मणों के बगैर ही करने लगे। उन्होंने अपनी धार्मिक–संस्कार विधि लागू की और उसी के अनुरूप स्वयं ही काम करना शुरू कर दिया। मराठों के धार्मिक संस्कार मराठा पुरोहित ही करने लगे। छत्रपति शाहूजी ने हमेशा ब्राह्मण–पुरोहित को एक नौकर से ज्यादा महत्व नहीं दिया। ब्राह्मण–पुरोहित भी छत्रपति शाहूजी के सामने खड़े रहने की हिम्मत नहीं कर सकते थे। धीरे–धीरे छत्रपति शाहूजी की वेदों के प्रति जो कुछ आस्था थी, वह भी अब टूटती जा रही थी। उनके मन में ज्योतिबा फुले के सार्वजनिक सतधर्म और सत्यशोधक समाज के प्रति गहरी आस्था बढ़ रही थी क्योंकि ब्राह्मण–पुरोहितवाद के श्रेष्ठत्व, ब्राह्मणों के जाति–अंहकार तथा उनके गर्व को चकनाचूर करने की ताकत ज्योतिबा फुले के सत्यशोधक समाज में ही थी, ऐसी उनकी मान्यता थी। छत्रपति शाहूजी के सामने सबसे महत्वपूर्ण समस्या थी ब्राह्मणों के जाति श्रेष्ठत्व और उनके आतंकवाद को जड़ से समाप्त कर देना। इसलिए छत्रपति शाहूजी ने गैर ब्राह्मणों को अपने संस्कार अपने पुरोहितों द्वारा ही संपन्न करने पर बल दिया।

साभार :
छत्रपति शाहूजी सचित्र जीवनी
(पृष्ठ सं० 70 से 70 तक)
डॉ. विमल कीर्ति

गलत सीखी चीजें भूलने के लिए तैयार रहें- कारगर होने का तरीका बदलता है

''मैं आपको इस बात के लिए प्रोत्साहित करना चाहता हूँ कि आपने स्कूल में चाहे जो सीखा हो, हमेशा उसे भूलने और नया सीखने के लिए तैयार रहें। सपने देखना कभी न छोड़ें। अगर हम सभी बेहतर दुनिया का सपना देखते हैं, तो मैं गारंटी दे सकता हूँ कि आप वहाँ पहुँच जाएँगे।''

आप जानते हैं कि यह कितना मुश्किल होता है। आप वही काम कर रहे हैं, जो आप हमेशा करते थे और अचानक आपके लक्ष्य पूरे नहीं हो रहे हैं, बिक्री घट रही है, नौकरी छोड़कर जाने वाले कर्मचारियों की तादाद बढ़ रही है, चीजें बिखर रहीं हैं। लेकिन आप तो वही काम कर रहे हैं, जो आपने अतीत में किया था। आपके पास एक विजेता फॉर्मूला था और अचानक यह कारगर नहीं रहा। ऐसे में आप क्या करें? सबसे पहले तो यह जान लें कि हर कारगर चीज समय के साथ बदलती है। और यह इतनी तेजी से बदल सकती है कि आपको इसका तब तक एहसास नहीं होगा, जब तक कि बहुत देर नहीं हो जाएगी। इसके बारे में जागरूक रहें, तैयार रहें और जल्द से जल्द ढलने की तैयारी करें। आपको इन चीजों की जानकारी होनी चाहिए :

1. आपके उद्योग के ताजा नवाचार
2. नई प्रौद्योगिकी
3. नई शब्दावली
4. नई विधियाँ
5. बिक्री या बाजार की प्रवृत्तियाँ, नौकरी छोड़कर जाने वाले कर्मचारियों के आँकड़े, लक्ष्य और बजट।

कभी एक ही लीक पर न चलते रहें। अगर जरूरत हो, तो सिक्के पर घूमने के लिए तैयार रहें। अच्छे प्रबंधन का मतलब है परिवर्तन के साथ तेजी से और चतुराई से ढलना। अगर आप ऐसा नहीं करते हैं, तो आप भी डायनासोर की तरह विलुप्त होने की राह पर जा रहे हैं।

यही हर चीज के बारे में सही है – उदाहरण के लिए स्टाफ के मैनेजमेंट की शैली। बरसों तक आप उनके साथ सफल व्यवहार कर रहे थे, लेकिन अब अचानक वह तरीका काम करना बंद कर देता है। यह भी हो सकता है कि आपकी तमाम कोशिशों के बावजूद आपका स्टाफ तेजी से नौकरी छोड़कर जाने लगे। बेहतर होगा कि आप पुराने तरीके भूलने और नए तरीके अपनाने के लिए तैयार रहें। हो सकता है कि आप अनजाने में, अचेतन रूप से बदल गए हों। अगर हम काम करने के उन्हीं तरीकों में फँसे रहते हैं, तो कई बार हम अनजाने में उन्हें बदल देते हैं, हालाँकि इस परिवर्तन को हम खुद नहीं पहचान पाते। हमें अंदर से आने वाले इन परिवर्तन के प्रति जागरूक रहना होगा।

साभार :
मैनेजमेंट के नियम
(पृष्ठ सं० 118 से 119 तक)
रिचर्ड टेंपलर

नारायणा गुरु के प्रयासों से दलित-शोषित समाज को काफी लाभ पहुँ च

–कांशीराम

(त्रिवेन्द्रम)

7 दिसम्बर 1983 को एक सभा का आयोजन 'थाइनाड को–आपरेटिव सोसायटी हाल' में किया गया।

सभा को सम्बोधित करते हुए मा. कांशीराम जी ने कहा कि नारायणा गुरू जी के प्रयासों से दलित–शोषित समाज को काफी लाभ पहुँचा। परन्तु उसके बाद दक्षिण में कोई असरदार कार्य नहीं हो सका। अन्याय और अत्याचार को दूर कारने के लिए वर्तमान प्रयास पर्याप्त नहीं। वर्तमान समाज–व्यवस्था की ओर ध्यान दिलाते हुए मा. कांशीराम जी ने कहा कि हम किसी तरह से इस समाज–व्यवस्था के शिकार हैं। आपने यह भी कहा कि शिक्षा के माध्यम से शिक्षा और राजनीति के क्षेत्र में कुद तो जागृति आई परन्तु उच्चवर्गीय हिन्दू लोगों ने हमारे बीच चमचे भी पैदा किये।

दलित–शोषित समाज के भविष्य के संदर्भ में चर्चा करते हुए आपने कहा कि, धरती पर हमसे बढ़कर और कोई बहानेबाज नहीं होंगे। यह अच्छा हो जाएगा अगर हम बहानेबाजी छोड़कर अपने आपको शक्तिशाली बनाने का प्रयास करें। अगर दलित–शोषित समाज सही ढंग से प्रयास करता है तो शीघ्र ही वह अपनी मंजिल तक पहुँच सकता है।

(बहुजन संगठक, वर्ष 4, अंक 44, 6 फरवरी, 1984)

साभार
मा. कांशीराम साहब के ऐतिहासिक भाषण
खण्ड–2, (पृष्ठ सं० 258 से 258 तक)
ए. आर. अकेला

छत्रपति साहू महाराज

हमारे देश में अनेक व्यक्तित्व ऐसे हुए है जो सुविधाओं में पले, पर जैसे – जैसे बचपन से उन्होंने जवानी की ओर कदम रखा, वैसे – वैसे उन्होंने अभाव में रह रहे लोगों की पीड़ा तथा दर्द को समझा, महसूस किया और उनके लिए कार्य कर समाज के सामने एक आदर्श प्रस्तुत कर दिखाया। ऐसे ही महापुरूषों में से थे छत्रपति साहू महाराज जी, जिन्होंने राजा होते हुए भी हर समय दलित तथा शोषित वर्ग से अपना रिश्ता बनाए रखा।

साहू महाराज का जन्म 26 जुलाई 1874 में हुआ था। उनके पिता का नाम श्रमंत जयसिंह राव आबा साहब घाटगे और माता का नाम राधाबाई था। उनके बचपन का नाम यशवन्तराव था।

साहू महाराज की शिक्षा राजकोट के 'राजकुमार महाविद्यालय' में हुई। राजकोट की शिक्षा समाप्त कर आगे की शिक्षा समाप्त कर आगे की शिक्षा प्राप्त करने के लिए 1890 से 1894 तक वे धारावाड़ में रहें। उन्हें अंग्रेजी और इतिहास आदि अन्य विषयों से राजकाज चलाने की भी शिक्षा दी गई। वे पढ़ाई – लिखाई में कुशल थे। साथ ही शासन सम्बन्धी मामलों को जल्दी ही समझ लिया था।

छत्रपति साहू महाराज 1894 में कोल्हापुर रियासत के राजा हुए। उन दिनों समाज में जातिवाद का बोलबाला था। समाज में जाति, धर्म तथा वर्गों के आधार पर विषमता बढ़ रही थी। समाज का एक वर्ग पिस रहा था और दूसरा उस पर हावी था। साहू महाराज ने इस सबका विश्लेषण करने के बाद दलितोद्धार का कदम उठाया। उन्होंने शूद्रातिशूद्र वर्ग को ऊपर उठाने के लिए एक योजना बनाई और उसे कार्यरूप में लाए। इसके लिए उन्होंने दलित तथा पिछड़ी जातियों के लोगों के लिए स्कूल – कॉलेजों की स्थापना के साथ – साथ उनके लिए छात्रालयों की स्थापना की। समाज में जो वर्ग हजारों वर्षों से सताया जा रहा था, जब उसमें पवित्तन होने लगा तो उच्च वर्ग हजारों वर्षों से सताया जा रहा था, जब उसमें परिवर्तन होने लगा तो उच्च वर्ग को बुरा लगा। वे महाराज को अपना शत्रु समझने लगे। परिणाम यह हुआ कि साहू महाराज की तथाकथित सवर्ण जाति के लोग एक स्वर में निन्दा करने लगे। स्वयं राजपुरोहित ने कहा– 'आप शूद्र है और शूद्र को वेद मन्त्र सुनने का अधिकार नहीं है।' उस समय कोल्हापुर के राजपुरोहित का समर्थन शंकराचार्य ने भी किया था। साहू महाराज ने बहुजन समाज को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से इन सबका डटकर मुकाबला किया।

उन्होंने इस बात को भली भांति समझ लिया था कि दलित तथा पिछड़ी जातियों की अवनति के पीछे समाज में जातिभेद ओर विषमता एक बड़ा कारण रहा है– एक वर्ग का मान – सममान हो तथा दूसरे का अपमान। उन्होंने अमानवीय आधार पर चल रही परम्परा पर वार किया और जन – जन में प्रचार के लिए आन्दोलन चलाया।

1911 में साहू महाराज ने अपने संरक्षण में 'सत्य शोधक समाज' की स्थापना की। उन्होंने कोल्हापुर में 'सत्य शोधक पाठशाला' चलाई। गांव – गांव में सत्य शोधक समाज के सम्मेलन आयोजित किए। यही नहीं दलित समाज के विद्यार्थियों को धर्मज्ञान प्राप्त करने की स्वस्थ परम्परा का विकास किया। ध्यान रहे कि 1873 में महाराष्ट्र के महान समाज सुधारक ज्योतिबा फुले ने 'सत्य शोधक समाज' की स्थापना की थी। जात – पांत, ऊंच – नीच की मानवद्रोही और समाजद्रोही विचार प्रणाली के विरूद्ध मानव और मानव के बीच समता का समर्थन करने वाला यह आन्दोलन था। साहू महाराज ने इसी आन्दोलन को अपनी रियासत में आगे बढ़ाया था।

1919 में डॉ0 अम्बेडकर साहू महाराज के सम्पर्क में आए। उनकी सहायता से ही 31 जनवरी 1920 में बाबा साहेब ने मूकनायक (गूंगों का नेता) मराठी पाक्षिक समाचार – पत्र आरम्भ किया।

21 मार्च 1920 को कोल्हापुर रियासत के माणगांव में डॉ0 अम्बेडकर की अध्यक्षता में दलितों का एक सम्मेलन हुआ। उस सम्मेलन में साहू महाराज ने भाषण देते हुए कहा था– 'भाइयों, आज आपको डॉ0 अम्बेडकर के रूप में अपना रक्षक नेता मिला। मुझे पूर्ण विश्वास है कि डॉ0 अम्बेडकर आपकी गुलामी की बेड़ियां तोड़ देंगे। समय आएगा और डॉ0 अम्बेडकर अखिल भारत के प्रथम श्रेणी के नेता के रूप में चमक उठेंगे।' उस समय कौन जानता था कि साहू महाराज की भविष्यवाणी एक दिन सही साबित होगी।

15 अप्रैल 1920 को साहू महाराज के सहयोग से ही नासिक में 'विद्या वसतीगृह' की स्थापना हुई। इसकी स्थापना करते हुए उन्होंने कहा था– 'बहुत से लोगों का कहना है कि जाति भेद बुरा नहीं, पर जातिद्वेष नहीं होना चाहिए।' ऐसा विचार रखने वाले लोगों को समझाते हुए उन्होंने कहा कि जातिभेद का कार्य ही जातिद्वेष पैदा करता है। इसलिए जातिभेद सबसे पहले समाप्त करना चाहिए।

साहू महाराज सम्पूर्ण भारतीय समाज में परिवर्तन देखना चाहते थे। एक ओर उन्होंने जहां आदिवासियों को गांवों मे बसाने का कार्य किया वहीं दूसरी तरफ प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य और मुफ्त करने का कानून भी 1912 में बनाया था। उन्होंने पुनर्विवाह के लिए भी कानून बनाया। इस तरह से उन्होंने अन्य क्षेत्रों में भी क्रांतिकारी कानून बनाकर समाज में परिवर्तन होने की परिस्थितियों की संरचना में सहयोग दिया। उनका किसी जाति विशेष के लोगों से कोई द्वेष न था लेकिन समाज में स्वस्थ्य मूल्यों का निर्माण करना चाहते थे। इसलिए ही शायद तत्कालीन समय में उच्च वर्ग के कुछ लोग उनके विरोधी हो गए थे और उन्हें अपना शत्रु मानने लगे थे। पर साहू महाराज किसी के शत्रु न थे। न ही किसी को शत्रु बनाने में रूचि थी। वे तो मानव – मानव के बीच प्यार और भाईचारे के अंकुर पैदा करना चाहते थे। जिसमें किसी सीमा तक वे सफल भी हुए।

निश्चित ही साहू महाराज ने भारतीय समाज से विषमता समाप्त करने तथा समता और बराबरी के मानवीय सिद्धान्त को लागू कराने के लिए जीवनभर जो संघर्ष किए, वे हमेशा – हमेशा के लिए याद किए जायेंगे तथा समाज की भावी पीढ़ी उनसे हर एक युग में प्रेरणा भी लेती रहेगी। उन्होंने जातिभेद समाप्त करने के लिए एक ऐतिहासिक कार्य किया था। यही नहीं, समय – समय पर वे बाबा साहब डॉ0 अम्बेडकर को हर तरह से सहयोग भी किया करते थे। उनके मन में बहुजन समाज के लिए गहरा लगाव था। वैसे वे हर समाज की प्रगति देखना चाहते थे। पर जो भी कारणवश पिछड़ गए थे उन्हें आगे लाना भी वे अपना फर्ज समझते थे।

10 मई 1922 को उनका निधन हो गया। स्वयं बाबा साहब डॉ0 अम्बेडकर को उनके निधन पर बहुत दुःख हुआ था। क्योंकि वे जानते थे कि इस तरह के महापुरूष बिरले ही जन्म लेते हैं। ऐसे बहुत कम लोग हैं जो समाज के लिए जीते हैं। साहू महाराज उनमें से ही एक थे, जो जीवनपर्यंत समाज में समता और बराबरी देखने के लिए संघर्ष करते रहे।

साभार :
समता की ओर (सूचना विभाग), पृष्ठ 13–16

परिच्छेद : चार (वराह और हिरण्यगर्भ के संबंध में)

धोंडीराव : कच्छ की मृत्यु के बाद द्विजों का मुखिया कौन हुआ?

ज्योतिराव : वराह।

धोंडीवार : भागवत आदि इतिहासकारों ने यह लिखकर रखा है कि वराह का जन्म सुअर से हुआ है। इसमें आपकी क्या राय है?

ज्योतिराव : वास्तव में सही बात यह है कि मनुष्य और सूअर में किसी भी दृष्टि से कोई समानता नहीं है। अपनी बात को अधिक स्पष्ट करने के लिए और तुम्हें अच्छी तरह समझ में आ जाए, इसलिए यहां उदाहरण के रूप में सिर्फ एक ही बात कहना चाहता हूं कि वे अपने बच्चों को जन्म देने के बाद उनसे कैसा व्यवहार करते हैं, हमें सिर्फ यही देखना है। मनुष्य जाति की नारी अपने बच्चों को जन्म देते ही वह अपने बच्चे को किसी भी तरह परेशान नहीं करती और उसे बड़े लाड–प्यार से पालती–पोसती है। लेकिन सुअरी कुतिया की तरह अपने पैदा किए पहले बच्चे को एकदम खा जाती है। उसके बाद दूसरे बच्चे को पैदा करती है। इससे यह सिद्ध होता है कि वराह की सुअरी माता ने सबसे पहले अपने सुअर बच्चे को खाकर बाद में उस मानव सुअर को पैदा किया होगा। किंतु भागवत आदि ग्रंथकारों के अनुसार, वराह यदि आदिनारायण का अवतार है, तो उसकी सर्वज्ञता और समानदृष्टि को दाग लगा या नहीं? क्योंकि वराह आदिनारायण का अवतार होने की वजह से, उसको पैदा करने वाली सुअरी को उसके बड़े सुअर भाई को मारकर नहीं खाना चाहिए था। उसने इसके पहले ही कुछ प्रबंध करके क्यों नहीं रखा था? हाय! यह पद्मा सुअरी वराह आदिनारायण की मां ही तो है न! और उसने इस तरह से अपने नन्हे–मुन्ने अबोध बालक की हत्या क्यों की? 'बालहत्या' शब्द का अर्थ सिर्फ बच्चों को जान से मारना ही होता है, फिर वह बच्चा किसी का भी क्यों न हो। किंतु इसने अपने पैदा किए हुए मासूम बच्चे की ही हत्या करके खा लिया। इस तरह के के अन्याय का अच्छा अर्थ बोध हो, ऐसा शब्द किसी शब्दकोश में खोजने से भी नहीं मिलेगा। इसको यदि डाकिनी (डायन) कहा जाए, तो डाकिनी भी अपने बच्चों को नहीं खाती, यह एक पुरानी कहावत है। उस वराह की पद्मा माता को इस तरह का अघोर कर्म करने की वजह से नरक की यातनाएं भोगने से मुक्ति मिले, इसलिए उसने ऐसा पापमुक्ति का कर्म किया, इसका कहीं कोई जिक्र भी नहीं मिलता, इसका हमें बड़ा खेद होता है।

धोंडीराव : वराह की सुअरी माता का नाम यदि पद्मा था, तो इससे यह सिद्ध होता है कि उसके सुअर पति का भी कुछ न कुछ नाम होना ही चाहिए?

ज्योतिराव : पद्मा सुअरी के पति का नाम ब्रह्मा था।

धोंडीराव : इससे यही समझ में आता है कि प्राचीन काल में जानवर मनुष्यों की तरह आपस में एक दूसरे को ब्रह्मा, नारद और मनु जैसे नाम देते थे। उनके नाम इन गपोड़ी ग्रंथकारों को कैसे समझ में आए होंगे? दूसरी बात यह है कि पद्मा सुअरी ने वराह को उसके बचपन में अपने स्तन से दूध पिलाया ही होगा, इसमें कोई संदेह नहीं। किंतु बाद में उसके कुछ बड़ा होने पर गांव के खंडहरों में बहुत ही कोमल फूल–पौधों का चारा चरने की उसे आदत पड़ गई होगी कि नहीं, यह तो वही वराह आदिनारायण ही जाने। इस तरह से उनके (धर्म) ग्रंथों में कई तरह के महत्वपूर्ण सवालों के जवाब नहीं मिलते। इसलिए मुझे लगता है कि धर्मग्रंथों में जो कुछ लिखा मिलता है, वह सब झूठ है कि वराह सुअरी से पैदा हुआ है और इस तरह की झूठमूठ की बातें शास्त्रों में लिखते समय उन ग्रंथकारों को तनिक लज्जा भी नहीं आई होगी?

ज्योतिराव : यह कैसी बेतुकी बात है कि तुम्हारे जैसे ही लोग उस तरह के झूठे ग्रंथों की शिक्षा की वजह से ब्राह्मण–पुरोहितों और उनकी संतानों के पांवों को धोकर पीते हैं। अब तुम ही बताओ, इसमें तुम निर्लज्ज हो या वे?

धोंडीराव : खैर, अब इन सब बातों को छोड़ दीजिए। आपके ही कहने के अनुसार, उस मुखिया का नाम वराह कैसे पड़ा गया?

ज्योतिराव : क्योंकि उसका स्वभाव, उसका आचार–व्यवहार, उसका रहन–सहन बहुत ही गंदा था और वह जहां भी जाता था, वहीं जंगली सुअर की तरह झपट्टा मारकर अपना कार्य सिद्ध कर लेता था। इसी वजह से महाप्रतापी हिरण्यगर्भ और हिरण्यकश्यप नाम के जो दो महाप्रतापी क्षत्रियों ने उसका नाम अपनी प्रतिकार की भावना व्यक्त करने के लिए सुअर अर्थात वराह रखा। इससे वह और बौखला गया होगा और उसने अपने मन में उनके प्रति प्रतिशोध की भावना रखते हुए उनके प्रदेशों पर बार–बार हमले करके, वहां के क्षेत्रवासियों को कष्ट देकर, अंत में उसने एक युद्ध में (हिरण्याक्ष) हिरण्यगर्भ को मार डाला। इसका परिणाम यह हुआ कि देश के सभी क्षेत्रपतियों में घबराहट पैदा हो गई और वे कुछ लड़खड़ाने लगे और इसी दौरान वराह मर गया।

साभार – गुलामगीरी
पृष्ठ सं. 37 से 38
ज्योतिराव फुले, अनुवादक डॉ. विमल कीर्ति

अध्याय – 15 अशुचि और अछूत

I

अस्पृश्यता अस्तित्व में कब आई? कट्टर या रूढ़िवादी हिन्दुओं का कहना है कि यह अत्यंत प्राचीन काल से चली आ रही है। अपने कथन के आधार के समर्थन में उनका कहना है कि छुआछूत का माना जाना न केवल स्मृतियों में मिलता है जो कि जरा पीछे की है। किंतु धर्म सूत्रों में भी है, जो कुछ लेखकों के मत से ईसा से कुछ शताब्दियों के पूर्व के हैं।

छुआछूत की उत्पत्ति का अध्ययन करने के लिए जिस प्रश्न से आरंभ करना होगा, वह यह है कि क्या यह प्रथा इतनी पुरानी है, जितनी पुरानी यह कही जाती है?

इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हमें सूत्रों का निरूपण करना होगा जिससे हम इस बात का निर्णय कर सकें कि जब धर्म सूत्र अस्पृश्यता और अछूतों की बात करते हैं, तो उनका तात्पर्य क्या है? क्या वे जिस वर्ग के लिए अछूत शब्द का प्रयोग करते हैं वह उन्ही में है जिन अर्थों में हम आज अछूत शब्द का प्रयोग करते हैं?

पहले प्रश्न को ही पहले लें। धर्म सूत्रों का निरूपण करने से निस्संदेह इस बात का पता लगता है कि उनमें से एक वर्ग का वर्णन है जिसे वे अस्पृश्य कहते हैं। इसमें भी कोई संदेह नहीं है कि अस्पृश्य शब्द का अर्थ है अछूत। तो भी यह प्रश्न बाकी रहता है कि क्या धर्म सूत्रों के अस्पृश्य वे ही हैं जो आधुनिक भारत के अस्पृश्य हैं? यह प्रश्न महत्वपूर्ण बन जाता है, जब हमें मालूम होता है कि धर्म सूत्र ऐसे ही और भी कई शब्दों का प्रयोग करते हैं जैसे अन्त्य, अन्त्यज, अन्त्यवासिन तथा बाह्यवाद की स्मृतियों में भी इन शब्दों का प्रयोग किया गया है कि भिन्न–भिन्न अर्थों में प्रयुक्त किया गया है इसे जान लेना उपयोगी होगा। नीचे की तालिका से यह उद्देय पूरा होता है :–

1. अस्पृश्य

धर्म सूत्र	स्मृति
1. विष्णु 5, 104	1. कात्यायन मंत्र 433, 783

2. अन्त्य

धर्म सूत्र	स्मृति
1. वशिष्ठ (16,30)	1. मनु 4.79, 8.68
2. आपस्तम्ब (3.1)	2. याज्ञवल्वय 1–148, 197
	3. अत्रि 25
	4. लिखित 92

3. बाह्य

धर्म सूत्र	स्मृति
1. आपस्तम्ब 1.2.39.18	1. मनु 2.8
2. विष्णु 16.14	2. नारद 1.155

4. अन्त्यवासिन

धर्म सूत्र	स्मृति
1. गौतम 31.23.32	1. मनु 4–79, 10–39
2. वशिष्ठ 18.3	2. महाभारत की शांति पर्व 141.29–32
	3. मध्यमांगिरस (मिताक्षरा में उदद्धत 3.2801

5. अन्त्यज

धर्म सूत्र	स्मृति
1. विष्णु 36,7	1. मनु 4–61, 8–279
	2.याज्ञवल्क्य स्मृति 12-73
	3.वृहद्यम स्मृति, याज्ञवल्क्य पर (मिताक्षरा में उद्द्धत) 3–260
	4. अत्रि 199
	5. वेद व्यास 1.12.12

II

दूसरा प्रश्न है कि क्या अन्त्य, अन्त्यज, अन्त्यवासिन तथा बाह्य शब्दों से वही बोध होता है जो अर्थ अछूत से। दूसरे शब्दों में क्या यह एक वर्ग से लोगों के लिए भिन्न–भिन्न नाम हैं?

यह दुर्भाग्य की बात है कि धर्मसूत्र इस प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ है। अस्पृश्य शब्द दो जगह आया है। (एक सूत्र में एक बार और फिर स्मृति में एक बार) लेकिन एक भी जगह उन जातियों की गिनती नहीं की गई, जिनका यह शब्द द्योतक है। यही स्थिति अन्त्य शब्द के बारे में है। यद्यपि अन्त्य शब्द छः जगह आया है (दो सूत्रों में और चार स्मृतियों) लेकिन उनमें किसी स्थल पर भी यह नहीं लिखा है कि इस शब्द के अंतर्गत कौन–कौन जातियां आती हैं? इसी तरह बाह्य शब्द चार जगह आया है। (दो सूत्रों में और दो स्मृतियों में) अन्त्यवासिन तथा अन्त्यज ये दोनों शब्द अपवाद रूप हैं। किंतु यहां भी किसी धर्म सूत्र में उनकी गिनती नहीं है, केवल स्मृतियों में उनकी गिनती है। अन्त्यवासिन की गिनती मध्यमंगिरस नामक स्मृति में दी गई है और अन्त्यज की अत्रि स्मृति तथा वेद व्यास स्मृति में। वे कौन हैं। यह नीचे तालिका में स्पष्ट हो जाएगाः–

अन्त्यवासिन	अन्त्यज	
मध्यमंगिरस	अत्रि	वेद व्यास
1. चाण्डाल	1. नट	चाण्डाल
2. श्वपक	2. मेद	श्वपक
3. छत्त	3. भिल्ल	नट
4. सूत	4. रजक	मेद
5. वैदेहिक	5. चर्मकार	भिल्ल
6. मागद	6. बुरूद	रंजक
7. अयोगव	7. कैवर्त	चर्मकार
		विराट
		दास
		भट्ट
		कोलिक
		पुष्कर

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि जहां तक अन्त्यवासिन और अन्त्यज शब्दों के प्रयोग की बात है उसमें न तो कहीं कुछ निश्चयात्मक है और न कहीं किसी प्रकार का अर्थ साम्य ही है। उदाहरण के लिए चाण्डाल और श्वपाक दोनों ही मध्यमंगिरंग और वेदव्यास के अनुसार अन्त्यवासिन और अन्त्यजों में भी गिने गए हैं। लेकिन जब मध्यमांगिरस की अत्रि के साथ तुलना की जाती है तो ये भिन्न श्रेणियों में विभक्त दिखाई देते हैं। यही बात अन्त्यज के लिए भी सत्य है उदाहरण के लिए वेदव्यास के अनुसार 1. चाण्डाल और 2. श्वपाक अन्त्यज हैं किंतु अत्रि के अनुसार वे अन्त्यज नहीं हैं। फिर अत्रि के अनुसार बुरूद और कैवर्त अन्त्यज हैं किंतु वेदव्यास के अनुसार वे अन्त्यज नहीं हैं। फिर वेद व्यास के अनुसार (1) विराट, (2) दास, (3) भट्ट, (4) कोलिक, (5) पुष्कर अन्त्यज हैं –

किंतु अत्रि के अनुसार नहीं।

इसका सार इतना ही है न तो सूत्रों से ही हमें यह निश्चय करने में कुछ सहायता मिलती हैं कि अस्पृश्य कौन थे और ना ही स्मृतियों से। इसी प्रकार धर्म सूत्र और स्मृतियां इस बारे में भी हमारी कुछ सहायता नहीं करती कि जो वर्ग अन्त्यवासिन , अन्यज अथवा बाह्य कहलाते थे क्या वे अस्पृश्य ही थे अथवा नहीं? क्या कोई दूसरा उपाय है जिससे यह निर्णय हो सके कि इनमें से कोई एक भी वर्ग अस्पृश्य अथवा अछूत की श्रेणी में आता है या नहीं? बेहतर तो यह होगा यदि हम इनमें से प्रत्येक वर्ग के बारे में जो भी जानकारी प्राप्त है, उसे एकत्र कर लें।

बाह्य को ही लें। वे कौन हैं? वे क्या हैं? क्या वे अछूत हैं? मनु ने उनका उल्लेख किया है उनकी स्थिति समझने के लिए मनु की सामाजिक वर्गीकरण की योजना का उल्लेख करना आवश्यक है। मनु लोगों को अनेक वर्गों में विभक्त करता है। पहले तो वह (1) वैदिकों (2) दस्युओं का वर्गीकरण करता है। इसके आगे वह वैदिकों को चार उप वर्गों में विभाजित करता हैः–

(1) जो चातुर्वर्ण्य के भीतर हैं

(2) जो चातुर्वर्ण्य के बाहर है

(3) ब्रात्य

(4) पतित या जाति से बहिष्कृत है।

कोई आदमी चातुर्वर्ण्य के अंदर गिना जाए या नहीं, वह इस बात पर निर्भर करता था कि उसके माता–पिता का वर्ण क्या है? यदि वह समान वर्ण के माता–पिता की संतान है तो वह चातुर्वर्ण्य के अंदर गिना जाता था। यदि वह अलग–अलग वर्ण के माता–पिता की संतान हुआ जिसे मिश्रित विवाह का परिणाम कह सकते हैं अथवा जिसे मनु वर्ण संकर कहता है तो वह चातुर्वर्ण्य से बाहर माना जाता था। जो चातुर्वर्ण्य के बाहर माने गए हैं मनु ने उसके फिर दो भेद किए हैं। (1) अनुलोग, (2) प्रतिलोम। अनुलोम वे जिनके पिता ऊंचे वर्ण के किंतु माता नीच वर्ण की और प्रतिलोम उससे उल्टे अर्थात जिनकी माता ऊंचे वर्ण की और पिता नीचे वर्ण के। यद्यपि चातुर्वर्ण्य के बाहर होने के कारण अनुलोम तथा प्रतिलोम दोनों समान ही थे तो भी मनु ने दोनों में भेद किया है। अनुलोमों को वह वर्ण बाह्य अथवा केवल बाहर कहता है और प्रतिलोम को हीन। ''हीन'' बाह्य लोगों से निचले दर्जे के हैं लेकिन न बाह्य ही मनु की दृष्टि से अछूत हैं और न हीन ही।

अन्त्यों का एक वर्ण के रूप में मनुस्मृति के श्लोक 4. 79 में उल्लेख किया गया है किन्तु मनु उनकी गणना नहीं करते। मेधातिथि ने अपने भाष्य में बताया है कि अन्त्य का अर्थ म्लेच्छ है जैसे भेद इत्यादि। बुलहर ने अन्त्य का अनुवाद हीन जाति के आदमी के रूप में किया है।

इस प्रकार अन्त्यों के अछूत होने की किसी तरह पुष्टि नहीं होती। अधिक संभव यही है कि यह नाम उन लोगों को दिया गया था जो गांव के अंत में रहते थे। उनको नीच जाति के गिने जाने के कारण बृददारण्यक उपनिषद की कथा में आता है, जिनका काणे ने उल्लेख किया है। कथा इस प्रकार हैः–

''देवताओं और असुरों में संग्राम हुआ। देवताओं ने सोचा कि वे उद्गी उद्गीन्तक द्वारा असुरों पर विजयी हो सकते हैं। इसमें उद्धरण है कि इस देवता (प्राण) ने पाप जो इन देवताओं के लिए मृत्यु था, को इन देवों (वाक् आदि) के एक ओर फेंक कर देवताओं के अंत में पहुंचा दिया। इसलिए किसी को आर्यों की सीमा के बाहर नहीं जाना चाहिए न दिशाओं के अंत में (गृह निवासों के अन्त में) उसे यह विचार करना चाहिए कि ऐसा करने से वह पाप मन अर्थात काल के कराल गाल में जा सकता है।''

अन्त्य शब्द का अर्थ इस उद्धरण में आने वाले ''दिशाम अंत'' के अर्थ में आया है। यदि दिशाम अंत का अर्थ गांव की सीमा के सिरे पर लिया जा सकता है और उसे खींचतान कर निकाला हुआ अर्थ न समझा जाए तो अन्त्य शब्द के मूल अर्थ की कुछ व्याख्या हमारे हाथ लग जाती है। इससे यह अर्थ नहीं निकलता कि अन्त्य लोग अछूत हैं। इससे इतना ही अर्थ निकलता है कि वे गांव की सीमा पर रहते थे।

जहां तक अंत्यजों की बात है उनके बारे में जो कुछ हम जानते हैं, वह उनके अछूत होने की बात का खंडन करने के लिए पर्याप्त है। इन कुछ बातों की ओर ध्यान दिया जा सकता है।

महाभारत के शांति पर्व (109.9) में अन्त्यजों के सैनिक होने का उल्लेख है। सरस्वती विलास के अनुसार पितामह ने रजकों की सात जातियों की बात कही है, जो प्रकृति के रूप में अन्त्यजों में गिने जाते थे। प्रकृति का अर्थ धोबी आदि व्यावसायिक श्रेणियां हैं यह बात शक सम्वत् 622 के भिल्लम द्वितीय के संगमनेर (ताम्रपत्र) से स्पष्ट हो जाती है। इस ताम्रपत्र में 18 प्रकृतियों को दान में दिए गए एक गांव का उल्लेख है। वीरमित्रोदय का कहना है कि श्रेणी का अर्थ रजक आदि अठारह जातियां है जो सामूहिक तौर पर अंत्यज कहलाती है। इन बातों के रहते हुए यह कैसे कहा जा सकता है कि अंत्यज लोग अछूत माने जाते थे।

अब अन्त्यवासिनों को लें। वे कौन थे। क्या वे अछूत थे? अन्त्यवासिन शब्द का दो भिन्न अर्थों में प्रयोग हुआ है। इसका एक अर्थ है वह ब्रह्मचारी जो गुरू के पास उसके घर रहता है। ब्रह्मचारी के लिए अन्त्यवासिन शब्द आया है। शायद अंत में भोजन करने वाला होने से अन्तवासिन कहलाता हो। जो भी हो, यह निर्विवाद है कि इस संबंध में इस शब्द का अर्थ अछूत नहीं हो सकता तो हो ही कैसे सकता है जब केवल ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ही ब्रह्मचारी बन सकते है? दूसरे अर्थ में वह एक लोक समूह का द्योतक है किंतु इसमें भी इस बात में संदेह है कि यह शब्द अछूत का पर्याय था।

वशिष्ठ धर्म सूत्र (18.3) के अनुसार वे शूद्र पिता और वैश्य माता की संतान हैं। किंतु मनु 15.39 के मत के अनुसार वे चाण्डाल पिता और निषाद माता की संतान है। उनके वर्ग के संबंध में मिताक्षरा का कहना है कि अन्त्यवासिन अन्त्यजों का ही एक उपवर्ग है। इसलिए अन्त्यजों के बारे में जो बात सत्य है, वह अन्त्यवासिन के बारे में भी सत्य समझी जा सकती है।

III

यदि विषयांतर कर अपने प्राचीन साहित्य में अन्त्यवासिन, अन्त्य तथा अन्त्यज आदि की सामाजिक अवस्था के बारे में प्राप्त जानकारी का विवरण लें तो स्पष्ट है कि हमें यह कहने में संकोच है कि अछूत शब्द के आधुनिक अर्थ में वे अछूत थे, लेकिन तो भी ऐसे लोगों की भरपाई के लिए जिन्हें अभी संदेह बाकी हो, एक दूसरे दृष्टिकोण की भी समीक्षा की जा सकती है। यह मान कर कि उन्हें अस्पृश्य कहा गया है, हम यह पता लगाने का प्रयत्न करें कि धर्म सूत्रों के समय में अस्पृश्य शब्द का क्या लाक्षणिक अर्थ था।

हम उद्देश्य की पूर्ति के लिए धर्म शास्त्रों के बनाए हुए प्रायश्चित के नियमों को लें। इनका अध्ययन करने से हम यह देख सकेंगे कि क्या धर्म सूत्रों के समय में भी अस्पृश्य शब्द से भी वही अर्थ प्रकट होता है जो आज है।

इस उदाहरण के लिए अस्पृश्य कहलाने वाली एक जाति चाण्डाल को लें। पहले तो यह बात ध्यान में रखने की है कि चाण्डाल शब्द से किसी जाति विशेष का भान नहीं होता। यह एक दूसरे से भिन्न कई तरह के लोगों के लिए एक शब्द है। शास्त्रों में कुछ मिलाकर पांच तरह के चाण्डालों का वर्णन है। वे हैं:–

(1) शूद्र पिता और ब्राह्मण माता की संतान
(2) कुंवारी कन्या की संतान
(3) सगोत्र स्त्री की संतान
(4) संन्यासी होकर पुनः गृहस्थ होने वाले की संतान
(5) नाई पिता और ब्राह्मण माता की संतान

यह कहना कठिन है कि किस चाण्डाल का शुद्ध होना आवश्यक है। हम यह मान लेते हैं कि सभी चाण्डालों का शुद्ध होना आवश्यक कहते हैं। शास्त्रों ने शुद्धि के क्या नियम ठहराए हैं:–

''जाति बहिष्कृत, एक चाण्डाल, सूतक के कारण अपवित्र स्त्री, मासिक धर्म वाली स्त्री, मुर्दा तथा उनको स्पर्श करने वाले लोगों का यदि स्पर्श हो जाए तो सचैल (वस्त्रों सहित) स्नान से पवित्र हो सकेगा।''

''यह सतंभ, चिंता, श्मशान भूमि, रजस्वला स्त्री, अथवा सद्यप्रसूता स्त्री, अपवित्र आदमी अथवा चाण्डाल को स्पर्श करने वाले को पानी में डुबुकी लगा कर स्नान करना होगा।''

बौधयन वशिष्ठ से सहमत हैं, क्योंकि उसके धर्म सूत्र (प्रश्न–1, अध्याय 5, खंड–6, श्लोक–5) का कहना है:–

अपवित्र स्थान पर लगा हुआ वृक्ष, चिता, यज्ञ स्तंभ, चाण्डाल तथा वेद बेचने वाले को यदि कोई ब्राह्मण स्पर्श करेगा तो उसे सचैल स्नान करना होगा।''

मनु स्मृति के नियम इस प्रकार है:–

5.85 जब ब्राह्मण किसी चाण्डाल, किसी रजस्वला स्त्री, किसी पतित, किसी प्रसूता, किसी शव अथवा जिसने शव का स्पर्श किया हो, ऐसे किसी का स्पर्श करता है तो स्नान करने से शुद्ध होता है।

5.131 कुत्तों द्वारा मारे गए (पशु) का मांस, किसी अन्य मांसाहारी पशु द्वारा मारे गए प्राणी का मांस अथवा चाण्डाल द्वारा मारे गए प्राणी का मांस पवित्र होता है।

5.143 किसी वस्तु को किसी भी ढंग से ले जाता हुआ कोई व्यक्ति यदि किसी अपवित्र व्यक्ति या वस्तु से छू जाएगा तो उस चीज को बिना रखे ही यह आचमन करने से पवित्र हो जाएगा।

धर्म सूत्रों तथा मनुस्मृति से उद्धृत इन उद्धरणों से निम्नलिखित बातें स्पष्ट हो जाती हैं:–

1. चाण्डाल के स्पर्श से केवल ब्राह्मण ही अशुद्ध होता था।

2. संभवतः संस्कार विशेष के ही अवसर पर शुद्धि–अशुद्धि का ख्याल किया जाता था।

IV

यदि ये निष्कर्ष ठीक हैं तो यह अशुद्धि का ही मामला है जो अस्पृश्यता से बिल्कुल भिन्न है। अपवित्र और अछूत में भिन्नता बिल्कुल स्पष्ट हो। अछूत सभी को अपवित्र करता है, किन्तु अशुद्ध केवल ब्राह्मण को अपवित्र करता है। अशुद्ध का स्पर्श केवल संस्कारों के अवसर पर ही अपवित्रता का कारण बनता है, किन्तु अछूत का स्पर्श सदैव कारण बनता है।

एक और तर्क है जिसका उल्लेख अभी तक नहीं किया गया है। इससे यह मत सर्वथा निरर्थक सिद्ध हो जाता है कि धर्म सूत्रों में जिन जातियों के नाम आए हैं वे अछूत थीं। यह तर्क अध्याय 2 में आर्डर–इन–कौसिल की जातियों की जो सूची दी गई है और इस अध्याय में स्मृतियों के आधार पर बनाई गई सूची की तुलना करने से उत्पन्न होता है। इस तुलना से क्या प्रकट होता है?

1. स्मृतियों में दी गई जातियों की अधिक से अधिक संख्या केवल 12 है जबकि आर्डर–इन–कौंसिल में इन जातियों की संख्या 429 है।

2. ऐसी जातियां हैं जिनके नाम आर्डर–इन–कौंसिल में तो हैं किंतु स्मृतियों में नहीं हैं। कुल 429 में से 427 जातियां ऐसी हैं जिनके नाम स्मृतियों में हैं ही नहीं।

3. ऐसी जातियां है जिनके नाम स्मृतियों में है, किन्तु आर्डर–इन–कौंसिल की सूची में नहीं हैं।

4. ऐसी केवल एक जाति ऐसी है जिसके नाम दोनों में है। वह जाति है चमार।

जो यह नहीं मानते कि अपवित्र और अछूत अलग–अलग हैं वे उक्त बातों से अपरिचित प्रतीत होते हैं। लेकिन उन्हें यह बात स्वीकार करनी ही पड़ेगी। ये बातें इतनी विशेष और इतनी प्रभावोत्पादक हैं कि हमें इस बात को स्वीकार करना ही पड़ेगा कि अपवित्र और अछूत भिन्न–भिन्न हैं। पहली बात को लें। इससे एक महत्वपूर्ण प्रश्न पैदा होता है।

यदि दोनों सूचियों में एक ही वर्ग के लोगों का उल्लेख हो तो इन दोनों में यह भेद और इतना अधिक भेद क्यों हैं? यह कैसे है कि शास्त्रों में जिन जातियों का नाम आया है वे आर्डर–इन–कौंसिल में हैं ही नहीं? दूसरी ओर आर्डर–इन–कौंसिल में जिन जातियों का नाम आया है वे शास्त्रों की सूची में है ही नहीं? यह ऐसी कठिनाई है जिसे हल करना होगा।

यदि हम यह मान लें कि इससे एक ही वर्ग के लोगों का तात्पर्य है तो स्पष्ट ही है कि आरंभ में जो छुआछूत केवल बारह जातियों तक सीमित थी वह 429 जातियों में फैल गई। इस अस्पृश्यता के जंजाल के विस्तार का क्या कारण है? यदि ये 429 जातियां उसी वर्ग की हैं जिस वर्ग की बारह जातियों का शास्त्रों में उल्लेख हैं तो किसी भी शास्त्र में इन चार सौ उन्तीस जातियों का नाम क्यों नहीं है? यह हो ही नहीं सकता कि जिस समय शास्त्र लिखे गए उस समय इन चार सै उन्नतीस जातियो में से कोई एक भी जाति विद्यमान नहीं थी। यदि सब थीं तो कुछ तो अवश्य रहीं होंगी। तब जो थीं उनका भी नाम क्यों नहीं लिखा मिलता?

यदि यह मान कर चलें कि दोनों सूचियां एक ही वर्ग के लोगों की हैं तो इन प्रश्नों का कोई भी संतोषजनक उत्तर दे सकना टेढ़ी खीर है और यदि यह स्वीकार कर लें कि ये दोनों सूचियां दो भिन्न–भिन्न वर्गों के लोगों की हैं

सेवा में,

नाम श्री.....

पता .....

.....

.....

तो ये सब प्रश्न व्यर्थ जाते हैं। ये सूचियां भिन्न वर्गों के लोगों की हैं। क्योंकि शास्त्रों की सूचियां अपवित्र लोगों की हैं और आर्डर–इन–कौंसिल की सूची अछूत लोगों की है। यही कारण है कि दोनों सूचियां भिन्न हैं। दोनों सूचियों का भेद जो दूसरी बात से सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है इसी के पक्ष में है कि शास्त्रों में जिन वर्गों का वर्णन है वे केवल अपवित्र हैं। उन्हें आज के अछूत लोगों के साथ मिलाना भूल है।

अब दूसरी बात को लें। यदि अपवित्र और अछूत एक ही हैं तो ऐसा क्यों है कि 429 जातियों में से एकदम 427 जातियों का स्मृतियों को ज्ञान ही नहीं। स्मृतियों के समय में वे जाति रूप में विद्यमान रही ही होंगी। यदि अब अछूत हैं तो वे उस समय भी अछूत रही होंगी, तो तब की स्मृतियों में उनका नाम क्यों नहीं हैं?

अब तीसरी बात लें। यदि अपवित्र एक ही ओर वही हैं तो जिन जातियों का नाम स्मृतियों में आता है उनका नाम आर्डर–इन–कौंसिल की सूची में क्यों नहीं आया हैं? इस प्रश्न के केवल दो उत्तर हो सकते हैं। एक तो यह कि यद्यपि वे एक समय अछूत थे किंतु बाद में अछूत नहीं रहे। दूसरा यह कि दोनों सूचियों में ऐसी जातियों के नाम हैं जो एकदम भिन्न वर्ग की हैं। पहला उत्तर निराधार है क्योंकि छुआछूत तो सनातन है। समय न तो इसे मिटा सकता है न दूर ही कर सकता है। एकमात्र संभव उत्तर दूसरा ही है।

अब चौथी बात लें। इन दोनों सूचियों में एकमात्र चमार को ही क्यों स्थान मिला? इसका यह उत्तर नहीं हो सकता कि दोनों सूचियां एक ही वर्ग के लोगों की हैं। यदि यह उत्तर ठीक होता तो न केवल चमार, किंतु स्मृतियों की सूची में दी गई शेष सारी जातियों के नाम दोनों सूचियों में आए होते। लेकिन वे नहीं आए हैं। ठीक उत्तर यही है कि दोनों सूचियां दो भिन्न वर्ग के लोगों की हैं। अपवित्रों की सूची में से कुछ अछूतों की सूची में भी हैं। इसका कारण यही है कि जो एक समय अपवित्र थे वे ही बाद में अछूत हो गए। यह ठीक है कि चमार का नाम दोनों सूचियों में आता है लेकिन यह कोई इस बात का प्रमाण नहीं हो सकता कि अपवित्र और अछूत में कोई भेद नहीं। इससे यही सिद्ध होता है कि चमार जो किसी समय अपवित्र था बाद में अछूत बन गया। इसलिए उसका नाम दोनों सूचियों में शामिल करना पड़ा। स्मृतियों में वर्णित बारह जातियों में से अकेले चमारों को ही अछूत क्यों बनाया गया, इसका कारण समझना कठिन नहीं है। चमार और अन्य अपवित्र जातियों में जिस बात ने भेद की दीवार खड़ी की है यह बात गोमांसाहार है। जिस समय गो को पवित्रता का दर्जा मिला और गोमांसाहार पाप बन गया उस समय अपवित्र लोगों में जो मांसाहारी थे केवल वे ही अछूत बने। केवल चमार ही गोमांसाहारी जाति है इसलिए केवल इसी एक जाति का नाम दोनों सूचियों में आता है। चमारों के संबंध में जो प्रश्न है उसका उत्तर दो बातों के संबंध में निर्णायक है। छुआछूत इस बात का द्योतक है कि गोमांसाहारी ही अछूतपन का मूल कारण है और अपवित्र को अछूत से भिन्न करता है।

अस्पृश्यता और अपवित्रता एक ही नहीं है, इस बात का छुआछूत के काल निर्णय में बहुत महत्व है इसके बिना छुआछूत का समय निश्चित करने का प्रयत्न करना विषयांतर होगा।

साभार –
बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर
सम्पूर्ण वाङ्मय खण्ड – 14
पृष्ठ सं. 125 से 135
डॉ. बी. आर. अम्बेडकर